विशद
मूक उपदेश

(कहानी संग्रह)

भाग-2

लेखक : प.पू. आचार्य विशदसागरजी महाराज

विशद मूक उपदेश

कृति – **विशद मूक उपदेश (भाग-2)**

लेखक – प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

संस्करण – प्रथम-2012 प्रतियाँ – 1000

संकलन – **मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज**

सहयोग – **क्षुल्लक श्री 105 विदर्शसागरजी महाराज**
ब्र. लालजी भैया, सुखनन्दन भैयाजी

संपादन – **ब्र. ज्योति दीदी (9829076085), आस्था, सपना दीदी**

संयोजन – **ब्र. किरण, आरती दीदी ● मो.: 9829127533**

प्राप्ति स्थल –
1. **जैन सरोवर समिति – निर्मलकुमार गोधा**
2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट
मनिहारों का रास्ता, जयपुर
मो.: 9414812008 फोन : 0141-2319907 (घर)
2. **श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार**
ए-107, बुध विहार, अलवर
मो.: 94140165663.
3. **विशद साहित्य केन्द्र**
C/o श्री दिगम्बर जैन मंदिर कुआँ वाला जैनपुरी
रेवाड़ी (हरियाणा) प्रधान-09416882301

पुनः प्रकाशन हेतु – 31/- रु.

-: अर्थ सौजन्य :-

समोशरण विधान, दिनांक 29 दिसम्बर से 3 जनवरी, 2012 तक
समस्त दिगम्बर जैन समाज, सूरजमल विहार, दिल्ली द्वारा

विशद ज्ञानावगाहन

मंगलं भगवान अर्हंत मंगलं जैन आगमः।
मंगलं निर्ग्रंथ साधुः मंगलं धर्म भावना।।

भगवान जिनेन्द्र का शासन अत्यन्त निर्मल और गंभीर है जो अनेकांत और स्याद्वाद की महिमा से शोभायमान है। जैन शासन में प्रत्येक प्राणी का हित साधन को ध्यान में रखा गया है। ज्ञानी से ज्ञानी और अज्ञानी से अज्ञानी कोई भी प्राणी क्यों ना हो उसे निराश नहीं किया गया।

ज्ञानी जीव जहाँ आध्यात्म के सरोवर में अवगाहन करता है वहीं अज्ञानी जीव जिनवाणी का संदेश पाते हैं और संदेश के अभाव में जिन चरित्र या पुराण ग्रंथों के माध्यम से जीवन के सार का अनुभव प्राप्त करते हैं।

आज पाश्चात्य सभ्यता एवं भोगों की चकाचौंध में इंसान इतना व्याकुल और पागल हो रहा है कि उसे अपने जीवन में स्वकल्याण करना तो दूर की बात है सोचना भी मुश्किल हो रहा है। अब तो यह कहें कि स्वकल्याण तो दूर की बात है सदाचरण की बात भी नहीं सोच पा रहा है। प्रत्येक व्यक्ति सद्ज्ञान शून्य होता जा रहा है। ज्ञानहीन इंसान को अंधे के समान माना गया है। कहा भी है–

अंधा है वह क्षेत्र जहाँ, आदित्य नहीं है।
मुर्दा है वह राष्ट्र जहाँ साहित्य नहीं है।।

इंसान के पास चर्म चक्षु तो हैं; किन्तु ज्ञान चक्षु से हीन हो रहा है। लोगों के ज्ञान चक्षु खुलें इस हेतु छोटे–छोटे दृष्टांत कहानी के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इसमें जो भी कथन है वह कुछ सत्य घटनाओं पर आधारित है, कुछ सुने गये और कुछ पढ़े गये हैं।

कहानियों के पात्र एकदम काल्पनिक हैं, कहानी की रोचकता बनाने के लिए किसी ना किसी नगर, ग्राम का उल्लेख किया गया है तथा पात्रों के नाम भी दिए गये हैं। कोई घटना में यदि किसी का नाम कदाचित आ जाए तो अपने ऊपर न लें और यदि शिक्षा प्राप्त करने की बात है तो प्रत्येक पात्र में अपने ऊपर घटित करके जीवन की राह को सद्राह बनाया जा सकता है। इस हेतु मेरा यह प्रयास आपके जीवन का संबल बने, इसी भावना के साथ आपको दे रहे हैं एक लघु कृति 'विशद मूक उपदेश' (भाग–2)।

पुस्तक के लेखन, शुद्धिकरण एवं प्रकाशन में जिन–जिन महानुभावों का योगदान प्राप्त हुआ वह सभी आशीर्वाद के पात्र हैं।

– आचार्य विशदसागर

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	पृ.नं.
1.	तू स्वयं का नहीं	5
2.	गुरु बिन ज्ञान न होय	8
3.	मित्र परीक्षा	11
4.	इंसानियत की सीख	14
5.	अहंकार से अशांति	16
6.	लालच बुरी बला है	18
7.	अब पछताए होय क्या ?	20
8.	पुण्य–पाप की महिमा	22
9.	सामाजिकता	24
10.	प्रभु जब लेता है चमड़ी उधेड़ कर लेता	27
11.	कर्म न छोड़े कोई को	29
12.	बँटवारा माँ–बाप	33
13.	फैशन का फल	38
14.	लक्ष्मी की माया	43
15.	संस्कारों की प्रगाढ़ता	45
16.	झोली भरकर धन्यवाद	47
17.	विनय भाव	50
18.	एक झूठ का भयंकर उत्पात	52
19.	सच्चा पुजारी कौन ?	54
20.	विश्वास नहीं होता	56
21.	जिद का दुष्परिणाम	58
22.	प्रभु देता है तो छप्पर फाड़ के देता है	60
23.	न चेतन का न तन का	63
24.	जीवन की तपस्या व्यर्थ गई	65
25.	क्या जिन्दगी है ?	68
26.	स्वार्थपरता	71
27.	अहंकार की खाई	74
28.	करनी का फल	79
29.	रिश्वत का फल	82
30.	बड़े मियाँ सुभानअल्ला	84
31.	बकरा की दाढ़ी	87
32.	स्वारथ का संसार	89
33.	ऊँचाई का रास्ता	91
34.	स्वच्छंदता का परिणाम	93
35.	सत्–संस्कार	95
36.	आप कौन से मूर्ख है	97
37.	कर्म का फल	102
38.	जैसे को तैसा	105
39.	लालच बुरी बलाय	107
40.	गुरु और शिष्य	109
41.	दुर्भावना का फल	111
42.	बुद्धूराम	113
43.	इंसान की कीमत कितनी	116
44.	खाड़ा खोदे और को गिरे स्वयं ही जाय	118

1. तू स्वयं का नहीं

ग्राम राजगढ़ में सेठ नवल कुमार जी निवास करते थे। उसके एक पुत्र विनेश, पुत्री विनीता प्रसन्नतापूर्वक रहते थे। उनके यहाँ पर कारखाने में कर्मचारी ब्रजेश कुमार काम करता था। विनीता ने 10वीं कक्षा पास कर ली तो पिता नवलकुमार जी ने विनीता की शादी रामगढ़ निवासी विमलकुमार के पुत्र विनयकुमार के साथ कर दी। पुत्र विनेश 11वीं कक्षा में पढ़ रहा था। एक दिन वह स्कूल नहीं पहुँचा तब गुरुजी ने पूछा– कल स्कूल क्यों नहीं आए ? विनेश ने कहा– गुरुजी नहीं आए। तब गुरुजी ने पुनः पूछा– बताइये क्यों नहीं आए? विनेश ने सिर नीचा करके कहा– **गुरुजी कल सगाई हो रही थी** इसलिए नहीं आ पाए। गुरुजी ने कहा– **आज से तू मेरा नहीं रहा।** समय व्यतीत होता रहा। परीक्षा समय आने पर पूर्ण परिश्रम से अध्ययन किया और विनेश पास हो गया। अगला सत्र प्रारम्भ हुआ विनेश ने 12वीं कक्षा में प्रवेश लिया। लगभग तीन माह बाद पुनः विनेश तीन दिन तक स्कूल नहीं पहुँचा। तब गुरुजी ने पुनः पूछा– विनेश तुम तीन दिन तक स्कूल क्यों नहीं आये? विनेश चुप रहा। गुरुजी ने पूछा– विनेश बोलो कल क्यों नहीं आए? विनेश ने कहा– गुरुजी, कुछ कारण था इसलिए नहीं आ पाये। तब गुरुजी ने कहा– क्यों नहीं आए बताइये ना? तब विनेश ने कहा– गुरुजी शर्म आती है। तब गुरुजी ने कहा– शर्म किस बात की, बोलो स्कूल क्यों नहीं आए? तब विनेश ने सकुचाते हुए नीचे सिर करते हुए कहा– **गुरुजी शादी हो रही थी।** तब गुरुजी ने कहा– **तू अपने माँ–बाप का भी नहीं रहा।**

समय परिवर्तनशील है, अपनी गति से बढ़ता गया और एक वर्ष व्यतीत होते ही पुनः एक बार विनेश स्कूल नहीं पहुँचा। तब गुरुजी ने पूछा– विनेश

स्कूल क्यों नहीं आए? तब विनेश ने कहा– गुरुजी नहीं आ पाए। गुरुजी ने पूछा– कारण बताइए, कल स्कूल क्यों नहीं आए? विनेश नीचे सिर किए खड़ा रहा, कोई उत्तर नहीं दिया। तब गुरुजी ने डाँटते हुए कहा– विनेश कल स्कूल क्यों नहीं आए, शीघ्र बताइये। तब विनेश की आँखों से आँसू बहने लगे और रोते हुए कहा– **गुरुजी घर पर बच्चा हुआ था, उसकी व्यवस्था में लगे रहने से स्कूल नहीं आये थे।** तब गुरुजी ने कहा– **तू स्वयं का भी नहीं रहा।**

यह सुनकर विनेश के मन में जिज्ञासा उत्पन्न हुई और गुरुजी से शांतभाव धारण कर हाथ जोड़कर पूछा– गुरुजी मेरी समझ में नहीं आया, जब पहली बार स्कूल नहीं आया था, तब आपने पूछा तो मैंने कहा– सगाई थी इसलिए नहीं आया तब आपने कहा था कि **'तू मेरा नहीं रहा'**। दूसरी बार शादी के अवसर पर नहीं आने पर आपने कहा था **'माता–पिता का नहीं रहा'** और अब आज आप कह रहे हैं कि **'स्वयं का नहीं रहा'**। इसका मतलब क्या है, मैं आप से जानना चाहता हूँ। तब गुरुजी ने कहा– बेटा, सगाई हुई थी तब कहा था **'तू अपना नहीं रहा'** इसका मतलब है कि सगाई होने पर तेरा मन पढ़ने में एवं गुरु सेवा में नहीं रह पाएगा। निरन्तर पत्नी का चिंतन करता रहेगा। स्वयं से अधिक पत्नी की चिंता में लगा रहेगा जो भी कार्य करेगा उसमें पत्नी के हित का ध्यान होगा अतः तू गुरु का नहीं रहा।

दूसरी बार शादी के समय कहा था कि **'माता–पिता का नहीं रहा'** तो यह सत्य है, सभी स्थानों पर देख लीजिये जब तक शादी नहीं होती है लड़का घर आते ही माँ को पुकारता है। माँ मेरे लिये खाना दीजिए। माँ मेरे लिए पानी दीजिए, माँ मैं नहाना चाहता हूँ, माँ घूमने जा रहा हूँ; किन्तु शादी के बाद माँ को नहीं बल्कि पत्नी सारी जिम्मेदारी अपने हाथ में ले लेती है और पत्नी के कहे अनुसार ही सारा काम होता है अतः सिद्ध है कि–

'माँ–बाप का नहीं रहा और अब तक तो स्वयं तथा पत्नी की चिंता में मग्न रहता था। अब पुत्र के पैदा होते ही पत्नी का स्नेह बेटे में चला जाता है और वह बेटे की ही निरन्तर बात करती है तो उसकी खानापूर्ति में ही तेरा सारा समय तन–मन जीवन लग जाता है। अतः सिद्ध है कि **'अब तू स्वयं का भी नहीं रहा'**।

गुरुजी की बात सुनकर विनेश के अंतःचक्षु खुल गये और वह गृह में रहकर गृह से भिन्न रहकर संसार को एक मुसाफिर–खाना मानकर रहने लगा और परमात्मा की भक्ति करता हुआ अपने कर्त्तव्यों का पालन करता हुआ जीवन व्यतीत करने लगा।

सगाई होते ही गुरुदेव न याद आते हैं।
विवाह होते ही माँ–बाप को भूल जाते हैं।।
पुत्र पैदा होते ही होता है विशेष परिवर्तन।
पुत्र का जन्म होते ही लोग स्वयं के नहीं रह पाते हैं।।

क्रोध से बढ़कर है कौन, इंसान का दुश्मन।
खाक कर देता है क्रोध, तन–मन और जीवन।।
आये थे यहाँ हम, बहार पाने के लिये।
पर गैरों की उलझनों में उलझ कर रह गये।।

निज में उतर करके, स्वयं पाले सुरागे जिन्दगी।
इस जहान में तू, भटकता फिर रहा है।।
जानकर भी देह पर करता है इतना गुमना।
लानत है दुनियां के लोगों पर, चेतन को भूलते।।

***

2. गुरु बिन ज्ञान न होय

ग्राम सीकरी में नगर सेठ हरकचंदजी निवास करते थे। उनका एक पुत्र था जिसका नाम था हेमराज। स्कूल की शिक्षा प्राप्त करने के बाद पिता के साथ रहने लगा। एक बार नगर में आचार्य संघ का आगमन हुआ। समस्त नगरवासी आचार्यश्री का उपदेश सुनने मंदिरजी में गये। उपदेश सुनकर हेमराज के मन में धर्म की लगन जागी और प्रतिदिन श्री जिनेन्द्र का दर्शन करना प्रारम्भ कर दिया। प्रतिदिन दर्शन करते हुए एक वर्ष हुआ होगा कि पुनः एक बार पर्यूषण पर्व आया। ब्रह्मचारीजी व्रतों में उपदेश करने हेतु उपस्थित हुए, उन्होंने कहा–

जिन पूजा से सब सुख होय, जिन पूजा सम और न कोय।।
जिन पूजा से स्वर्ग विमान, अनुक्रम से पावे निर्वाण।।

हेमराज पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह कुछ भी सोचे बिना ही ब्रह्मचारीजी के समक्ष प्रतिदिन पूजा करने का संकल्प ले लिया और भगवान जिनेन्द्र की प्रतिदिन भक्ति भाव से दो घंटे तक पूजन करता था। पिता हरकचंद बहुत प्रसन्न होता था कि मेरा बेटा बड़ा धर्मात्मा है, समस्त नगरवासी भी हेमराज की प्रशंसा करते हुए नहीं थकते थे। चारों ओर शांति का वातावरण था।

एक बार पुनः अवसर आया जब मुनिसंघ का आगमन हुआ। नगर में वर्षायोग पर ऐसा योग बना कि हेमराज मुनिश्री के साथ रोजाना आहारचर्या में जाने लगा और धर्मध्यान पूर्वक समय व्यतीत करने लगा। मुनि संघ के विहार का समय आया तो हेमराज साथ में जाने को तैयार हो गया। पिता को पता चला तो परेशान हो गया। अरे ! मेरा बेटा घर छोड़कर साधु संघ में जा रहा है। पहले धर्म करता था तो प्रसन्नता थी और अब धर्मात्मा बनने जा रहा है

तो परेशानी प्रारम्भ हो गई। आखिर हेमराज कहाँ मानने वाला था, वह मुनि संघ के साथ ब्रह्मचारी बन धर्म एवं ज्ञान की साधना करने लगा।

एक बार किसी भक्त ने शास्त्र भेंट के दौरान एक पुस्तक भेंट की। उसमें स्वर्ण बनाने की विधि के रसायन विद्या का वर्णन दिया गया था। पुस्तक पढ़ते समय अच्छी तरह कई बार पढ़कर जानकारी प्राप्त की। अनेक प्रकार की वस्तुओं की आवश्यकता पड़ने लगी। वह समय-समय पर भक्तों से अनेक वस्तुएँ मँगवाने लगा एवं कितने दिनों का समय नष्ट करने पर भी स्वर्ण नहीं बना। तब उसके मन में अश्रद्धा भी होने लगी और क्रोध भी भड़कने लगा। उसने अनेक खरी खोटी बातें करते हुए पूर्वाचार्य, लेखकों एवं कवियों को धोखेबाज, चालाक, लुटेरा आदि कहना प्रारम्भ कर दिया। यहाँ तक कि अनेक लोगों को एकत्र करके धोखे की मजा चखाने हेतु पुस्तक के लेखक की खोज कर उन्हें दण्ड की व्यवस्था भी कर ली।

पुस्तक के लेखक आचार्य वहाँ पर उपस्थित हुए। उन्हें सारे दृश्य को देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ एवं ब्रह्मचारी स्वर्ण पाने के लिए इतने आतुर हैं। किन्तु विधि ठीक तरह नहीं जानने से स्वर्ण नहीं बन पाया इस कारण दुःखी तो है ही श्रद्धा और विश्वास से गिर गये तथा औरों को झूठा साबित कर उन्हें दंडित करने का दुस्साहस भी करने लगे। उन्होंने कहा- पुस्तक में जो लिखा है बिल्कुल सत्य लिखा है। हमारे सामने सारी सामग्री लाइये, सामग्री आते ही उन्होंने एक घंटे के अंदर स्वर्ण तैयार कर दिखाया। लोग आश्वस्त हुए और जय-जयकार करने लगे।

महाराज ने कहा- विधि लिखने में गलती नहीं है, गलती है समझने में। ब्रह्मचारी बहुत लज्जित हुए और महाराज के चरण-स्पर्श कर अपनी गलती स्वीकार कर क्षमा माँगी और निवेदन किया- मैं माया, मोह के चक्र में पड़ गया था। आप ही मेरे मोह-माया और अज्ञान को दूर कर सकते हैं।

आचार्यश्री ने देखते ही देखते उस पुस्तक को गहरे जल में विसर्जित कर दिया। लोगों ने पूछा- आपने ऐसा क्यों किया? तब महाराज ने कहा- यह पुस्तक ऐसे कुपात्र के हाथ में पड़ी कि वह मेरे लिए ही दंड देने को तैयार हो गए। भविष्य में पता नहीं कोई व्यक्ति पुस्तक पाकर स्वर्ण की लालच में अंधे होकर संत और भगवंत को भी झूठा साबित कर उन्हें नष्ट करने का उद्यम न करने लग जावें। अतः इस पुस्तक का विसर्जन करना ही श्रेष्ठ है।

इस कहानी से शिक्षा प्राप्त होती है कि कोई पुस्तकों से कितनी भी शिक्षा क्यों न प्राप्त कर लें; किन्तु वास्तविक तत्त्व और सत्य को प्राप्त नहीं कर सकता। कोरी पंडिताई अनर्थ का कारण बनती है अतः पात्र देखकर ही शास्त्र और ज्ञानदान प्रदान करना चाहिए।

कोटि-कोटि चंदा उगे, सूरज कोटि हजार।
सद्गुरु बिन संसार में, होता है अंधकार।।

और भी कहा है :-

किसान पत्थर पर बीज कभी बोता नहीं है,
पुत्र जन्म के अवसर पर कोई रोता नहीं है।
यह सब कदाचित् हो भी जाए कोई बात नहीं,
किन्तु गुरु के बिना विशद ज्ञान होता नहीं है।।

खान से निकलकर आते हैं, सभी पत्थर एक से।
जो तरासा गया वह भगवान हो गया।।
शाबास पत्थरो ! अन तराशे तो पत्थर थे।
तराशे गये तो भगवान हो गये।।

***

3. मित्र परीक्षा

एक राजा जंगल में अपने साथियों के साथ गर्मी के दिनों में घोड़े पर चढ़कर सैर करने लगा। अपना घोड़ा दौड़ाकर वह वन की प्राकृतिक छटा को देखने के लिए अपने साथी से आगे निकल कर अकेला रह गया। सघन वन में मार्ग भूल जाने से वह न तो अपने साथियों से मिल पाया और न उसके साथी उससे मिल पाये। दोनों एक–दूसरे को ढूँढ़ते–ढूँढ़ते थक गये। अंत में उसके साथी हारकर वापिस लौट आये।

राजा भी थककर बेचैन हो गया। उधर प्यास के मारे उसका गला सूख गया। तब वह घोड़े से मूर्छित होकर नीचे गिर पड़ा। उस वन में एक ग्वाला अपनी गायें चरा रहा था। वह उधर से आ निकला उसने राजा को मूर्छित पड़े देखा। तत्काल उसने अपने जलपात्र से पानी निकालकर राजा के मुख में डाला और कुछ उसके मुख पर छींटे मारे। अपने वस्त्र से उसके ऊपर ठंडी हवा की। ऐसा करने से राजा की मूर्छा दूर हो गई और राजा उठकर बैठ गया। राजा को अभी और प्यास थी, भूख भी लगी थी। उस ग्वाले ने अपने पास का भोजन राजा को खिलाया तथा यथेष्ठ जल पिलाया। राजा संतुष्ट हो गया। राजा विश्राम करके घोड़े पर सवार हो गया। तब उस ग्वाले ने राजा को उसके नगर में जाने का सीधा मार्ग बता दिया। राजा ने उस ग्वाले को दूसरे दिन राजसभा में आने को कहा और स्वयं नगर की ओर चल दिया।

दूसरे दिन वह ग्वाला राजसभा में पहुँचा। राजा ने उसका बहुत सम्मान किया कि इस मनुष्य ने कल मेरे प्राण बचाये। यह यदि मुझे जल और रोटी न देता तो मैं अवश्य मर जाता। इस कारण यह मेरा बहुत उपकारी मित्र है। मैं इसका ऋण जन्म भर भी नहीं उतार सकता। राजा ने इतना आभार प्रकट

करके उस ग्वाले को अपने महल के पास एक सुन्दर मकान में ठहरा दिया और अपने समान समस्त सुविधायें जुटा दीं। तब से वह ग्वाला राजसी ठाठ में राजा का मित्र बनकर वहाँ रहने लगा।

राजा का एक छोटा पुत्र था। वह ग्वाला उसको बहुत प्रेम करता था, अतः वह राजपुत्र भी ग्वाले के घर आकर खेला करता था। एक दिन ग्वाले ने राजा के प्रेम की परीक्षा लेने के लिये राजपुत्र को अपने घर सुख–सुविधा की व्यवस्था के साथ छिपाकर अदृश्य कर दिया। राजा ने पुत्र की बहुत खोज कराई; किन्तु उसके पुत्र का कहीं भी पता न चला। राजा तथा प्रजा बहुत दुःखी हुये।

तब दो दिन बाद उस ग्वाले ने राजपुत्र के सब आभूषण उतार लिये और उनको उस सुनार के पास बेचने के लिए गया जो कि राजा के आभूषण बनाया करता था। राजपुत्र के आभूषण सुनार ने तत्काल पहचान लिये और उसी समय इस बात की सूचना पुलिस अधिकारियों को दे दी। पुलिस अधिकारियों ने उसे तुरन्त गिरफ्तार करके राजा के सामने उपस्थित किया। नगर में कोलाहल मच गया कि राजपुत्र को उस ग्वाले ने जिसको राजा ने अपना मित्र बनाकर उपकृत किया है, मार डाला है और उसके आभूषण सुनार के पास बेचते हुए पकड़ा गया है। **'राजा उस कृतघ्न ग्वाले को क्या दंड देता है'** इस बात को सुनने देखने के लिये राजसभा में भीड़ एकत्रित हो गई।

राजा ने राजसिंहासन पर बैठकर ग्वाले की हथकड़ी खुलवा दी। नेत्रों में आँसू भरकर ग्वाले से कहा कि मित्र ! पुत्र यद्यपि बहुत प्यारा होता है परन्तु पुत्र से भी बढ़कर अपने प्राण होते हैं, तूने मेरे प्राण बचाये हैं इस कारण तू मेरा महान् उपकारी मित्र है। यदि तू मेरे एक पुत्र को क्या, मेरे सारे परिवार को भी मार डाले तो भी तेरे उपकार से मैं तेरे सामने झुका रहूँगा। कहते–कहते राजा रो पड़ा।

ग्वाले ने प्रफुल्लित होकर कहा कि राजन् ! दुःखी न होईये, मैं इतना कृतघ्न नहीं हूँ जो कि आपके पुत्र को मार देता। आपका पुत्र जीवित है। मैंने केवल आपके प्रेम की परीक्षा लेने के लिये यह सब कुछ किया था। इतना कहकर उसने राजपुत्र को अपने मकान से लाकर राजा की गोद में बिठा दिया। राजपुत्र भी प्रसन्न मुद्रा में था।

राजा ने प्रसन्न होकर ग्वाले को सीने से लगा लिया और बहुत-बहुत धन्यवाद दिया।

जिसके अंदर इंसानियत है वही सच्चा इंसान कहलाता है।
'विशद' इंसान को अपने कर्त्तव्यों का भान कराता है।।
वही कृतज्ञता इंसान के जीवन का श्रेष्ठ भूषण है।
कृतज्ञ इंसान उपकारों का बदला जीवन भर चुकाता है।।

***

सैर

पहले कभी जो हंस-हंसकर मौज से जिया करते थे।
आज हैं कि वह कराह भरने से भी नहीं थकते।।

जीवन की कहानी को गढ़ले अहले चमन में।
क्या पता कब दीप सा बुझ जाय यह।।

समय पाकर कर ले, जीवन का आरम्भ।
पता नहीं किस क्षण, इस जीवन का अंत हो जाय।।

भाव तीर्थ ही सार है, भाव से होता पार।
भाव यदि बेकार हो, तो जीवन बेकार।।

4. इंसानियत की सीख

एक डॉक्टर के पास एक गरीब व्यक्ति अपने पाँच साल के बेटे को लेकर आया। बेटा बुखार से तप रहा था। डॉक्टर से कहा- मैं गरीब आदमी हूँ, यह मेरा इकलौता बेटा है। मेरे पास ज्यादा पैसे नहीं है, आप इसे बचा लीजिये। मैं आपकी पाई-पाई मयसूद के चुका दूँगा। डॉक्टर ने बच्चे का इलाज करने से इन्कार कर दिया। गरीब बाप खूब रोया, गिड़गिड़ाया, डॉक्टर के चरणों में गिर पड़ा। अपने बच्चे के प्राणों की भीख माँगी, फिर भी डॉक्टर का दिल नहीं पसीजा। आखिरकार बच्चा मर गया। कुछ ही दिनों बाद डॉक्टर के बच्चे को सर्प ने डस लिया। डॉक्टर का भी यह इकलौटा बेटा था। उसने सब कुछ उपचार किया; लेकिन कुछ फायदा नहीं हुआ।

किसी ने डॉक्टर को बताया कि गाँव के बाहर एक गरीब आदमी रहता है, वह सर्प का जहर उतारना जानता है। उससे जाकर मिलो। डॉक्टर बेटे को लेकर रोते-रोते गाँव के बाहर उस गरीब व्यक्ति के पास पहुँचा। डॉक्टर ने उस व्यक्ति को गौर से देखा तो पहचान गया। वह कोई और नहीं बल्कि वही व्यक्ति था जो कुछ दिनों पहले अपने बेटे को इलाज कराने आया था। डॉक्टर ने पैसे के बिना इलाज करने से इंकार कर दिया था और उसका बच्चा डॉक्टर के सामने मर गया था। डॉक्टर के बच्चे का शरीर नीला पड़ चुका था। डॉक्टर ने रोते हुए कहा- मेरे बेटे को बचा लीजिये। गरीब व्यक्ति ने बगैर देर लगाये अपने मंत्रों से झाड़-फूंक की और उसका जहर उतार दिया।

थोड़ी देर बाद बच्चे को होश आया और चैतन्य हो उठा। डॉक्टर ने पाँच हजार रु. देने चाहे तो गरीब व्यक्ति ने कहा- डॉक्टर साहब मैंने बच्चे को बचाकर कोई बड़ा काम नहीं किया है। यह तो मेरा फर्ज था। ये पैसे आप अपने पास रख लीजिये। तब डॉ. ने व्यक्ति से पूछा मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ? सुनकर व्यक्ति की आँखों से आँसू आ गये। डॉ. ने पूछा-क्या

बात है भाई, आपको क्या हुआ ? तब व्यक्ति ने कहा–मेरा भी एक बेटा था, किन्तु दवा के अभाव में मर गया। आप देना ही चाहते हैं तो हाँ, इतनी विनती जरूर है कि जब कोई मुझ जैसा अभागा बाप अपने गरीब बेटे को लेकर आपके पास इलाज के लिए आए तो सिर्फ पैसों की खातिर उसका इलाज करने से इंकार मत करना। सोचना मैं भी किसी बेटे का बाप हूँ, मेरा भी एक बेटा है और बाप के लिए बेटे का मूल्य क्या होता है, ये मत भूलना। डॉ. को शिक्षा प्राप्त हुई और उसने संकल्प किया कि गरीब का इलाज बिना पैसे लिए ही करूँगा।

सद् चिंतन के अभाव में इंसान हैवान बन जाता है।
खोटी संगति पाकर मानव शैतान बन जाता है।।
सद् चिंतन विशद एक बार करके तो देखो जीवन में।
सद् चिंतन से अपराधी भी एक क्षण में महान् बन जाता है।।

***

सैर

डनलप के गद्दे पर नींद जिन्हें मुश्किल थी।
ढूँढ़ते हैं ईंट वह, तकिया लगाने के लिए।।
पेट भरने के लिए मुँहताज थे कल तक जो लोग।
आज वही पेटी भरकर भी संतुष्ट नहीं होते।।
देख पाओगे नहीं अपनों को नैनों को खोलते।
यदि देखना ही है तो जिगर से देखो।।
खुद ही समझ जाओगे खुदा की खुदाई को तुम।
एक बार खुद के हृदय में, झाँककर तो देखो।।
इतने दिये हैं धोखे लोगों ने, अपना बनाकर।
इसलिये हम जहाँ में भटकते फिर रहे हैं।।

5. अहंकार से अशांति

बम्बई में एक सेठ रहते थे जिनका नाम था रामनाथ। उन्हें भक्ति और पूजा में विशेष रुचि थी। वे समय–समय पर किसी न किसी साधु–संत इत्यादि को भी अपने बंगले पर लाया करते थे तथा उनका आतिथ्य किया करते थे; परन्तु इतना धन और भक्ति भावना होने पर वे भी अशांत रहते थे। एक बार उनके यहाँ एक सन्यासी आकर ठहरे हुए थे। सेठजी ने सन्यासी जी को बताया कि उनके जीवन में अशांति है।

दोपहर को जब सन्यासी जी और सेठजी ने भोजन कर लिया तो सेठजी उन्हें अपने बंगले को चारों ओर से दिखा रहे थे। बंगला दिखा चुकने के बाद सेठजी सन्यासी महोदय को बंगले के बगीचे में ले गए। वहाँ रंग–बिरंगे फूलों की शोभा देखने जैसी थी। सबकी मिली–जुली सुंगधि भी मन को बहुत लुभाने वाली थी। सेठजी, अंगुली के इशारे से सन्यासीजी को बता रहे थे–''इस फल का पौधा मैंने सिंगापुर से मँगाया था, वह सामने जो फूल है, उसकी कलम आस्ट्रेलिया से मँगाई गई थी और वह जो फूल दिखाई दे रहा है, वह जापान से लाया गया था।''

फिर एक कारखाने की ओर इशारा करते हुए सेठजी कहने लगे–''वह जो एक बहुत बड़ा कारखाना आप देख रहे हैं, वह मेरा है। उसमें तीन हजार व्यक्ति काम करते हैं। उधर दूसरी और जो बहुत बड़ी जमीन दिखाई दे रही है, उस पर अभी तीसरा कारखाना बनना शुरू होगा... मेरे पास चार–चार मोटरकार हैं... इस प्रकार सेठजी बहुत मजे से अपनी संपत्ति का वर्णन करते जा रहे थे।

कभी अपने गलीचों की बात करते, कभी फानूसों की। कभी फर्नीचर, कभी सजावटी सामान की और कीमती चित्रों तथा कलाकृतियों की। बताते

समय उनसे कुछ अभिमान के प्रकंपन आते थे। सन्यासी जी उनकी बातों को सुनते हुए केवल हूँ.. हूँ... ही करते रहे।

जब वे वापस अपनी बैठक में लौटे तो वहाँ विश्व का एक नक्शा लटक रहा था। सन्यासी महोदय ने सेठजी से कहा– सेठजी, इसमें भारत देश को कहाँ दिखाया गया है?

सेठजी ने चित्र में भारत देश पर अंगुली रख दी। सारे विश्व में भारत देश छोटा–सा टुकड़ा ही दिखाई देता था।

सन्यासी ने फिर पूछा– सेठजी, इसमें बम्बई को कहाँ दिखाया गया?

सेठजी ने नक्शे में बम्बई को दिखा दिया था? सारे विश्व में तो बम्बई का इतना ही स्थान है।

तब सन्यासीजी ने कहा– सेठजी, इसमें आपका बंगला कहाँ है, बगीचा और कारखाना कहाँ दिखाया गया है?

यह सुनकर सेठजी को लज्जा का अनुभव हुआ; क्योंकि जब बम्बई को ही नक्शे में बिन्दु के सदृश दिखाया गया था तो इतने बड़े विश्व में सेठजी के बंगले और कारखाने को कैसे दिखाया जा सकता था। सेठजी समझ गये थे कि सन्यासी जी ने उसके अभिमान को दूर करने के लिए ही सब पूछा है। सेठजी अब अभिमान को छोड़ने का पुरुषार्थ करने लगे, अतः अब उनके जीवन में शांति भी आने लगी।

इंसान अहंकार की कार में सवार हो गया।
इसलिए इंसान ही इंसान को भार हो गया।।
जिसने त्याग दिया सिर से अहंकार का भार।
उस इंसान का भवसागर से उद्धार हो गया।।

***

6. लालच बुरी बला है

बिहार प्रदेश के एक नगर में महावीर प्रसाद नाम का होम्योपैथी का एक डॉक्टर था। उसके पुत्र 'दशरथ' की शादी 'इन्द्रादेवी' नामक कन्या से हुई थी। शादी के बाद इन्द्रा का गौंना न होने का एक कारण यह भी था कि लड़के के पिता महावीर प्रसाद ने लड़की वालों से दान–दहेज के रूप में पच्चीस सौ रु. माँगे जो कि लड़की के पिता देने में असमर्थ थे।

आखिर लोगों के कहने पर इन्द्रा को उसका पति दशरथ अपने घर ले आया; लेकिन साथ ही उसके पिता को जल्दी ही रुपये देने के लिए ताकीद भी कर आया। दशरथ ने इन्द्रा को कुछ समय अपने पास रखा। फिर भी लड़की के पिता से रुपये न मिलने पर महावीर प्रसाद ने इन्द्रा पर इल्जाम लगाया और उसके पिता को लिखकर उसे फिर मायके वापस भेज दिया। इन्द्रा का गरीब पिता लाचार होकर उसे वापस अपने घर ले आया।

थोड़े समय के पश्चात् इन्द्रा के पिता ने लड़के के पिता को पत्र लिखकर इन्द्रा को ले जाने को कहा; लेकिन लड़के वालों ने उसे ले जाने से इन्कार किया। आखिर वह मजबूर होकर उसे लेकर, लड़के वालों के घर पहुँच गया।

लड़के और उसके पिता महावीर को यह बात पसन्द नहीं आई और उन्होंने लड़की के चाचा को इसकी शिकायत करते हुए लिखा कि या तो वे लड़की को ले जायें वरना वे उसे ऐसा इंजेक्शन लगा देंगे जिससे लड़की मर जाएगी; क्योंकि वे उससे जल्दी ही छुटकारा पाना चाहते हैं। इन्द्रा का पिता इन्द्रा को वापस नहीं ले गया। उसने सोचा होगा कि यहाँ तक नौबत नहीं आएगी; परन्तु लोभ तो मनुष्य को होने वाले परिणामों के प्रति अंधा कर देता है। उसी लोभ के कारण कुछ ही समय पश्चात् महावीर के घर में एक रात्रि इन्द्रा को मरा हुआ पाया गया। उसी रात्रि को महावीर ने अपने दो नौकरों

द्वारा उसकी लाश को एक टैक्सी में रखवा कर, शहर के बाहर बीस मील दूर एक नदी में फेंक दिया। उसने समझा कि उसके इन अनुचित और अन्याय पूर्ण कार्यों को कोई नहीं देख रहा। ससुर के लिए बहू तो पुत्री से भी बढ़कर प्रिय होना चाहिए; किन्तु महावीर का मन लोभ के कारण पत्थर बन गया था इसलिए उसने बेचारी इन्द्रा को निर्दयता से मरवा डाला और फिर अपने पापों पर पर्दा डालने लगा।

परन्तु भगवान को कुछ और ही मंजूर था। अगले दिन शहर में लोगों को मालूम हुआ कि इन्द्रा मर गई है तो शिकायत पुलिस स्टेशन तक पहुँची; क्योंकि लोगों को शक था कि उसके ससुर ने ही उसे मरवाया है। लड़की के भाई और पिता को भी जब सूचना मिली तो वे भी आ पहुँचे और उन्होंने भी रिपोर्ट लिखवा दी।

मुकदमा सैशन जज के सामने आया और जज महोदय सारा किस्सा सुनने के बाद इस निर्णय पर पहुँचे कि इन्द्रा को उसके पति और ससुर ने जहर देकर मारा है और उम्र कैद की सजा सुना दी। हाईकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट ने भी उम्र कैद की सजा सुना दी। सच है लालच बुरी बला है। पिता पुत्र का जीवन जीते जी नरक बन गया, हरा–भरा परिवार लालच के कारण उजड़ गया। अनेक यातनाओं को सहते हुए संक्लेश पूर्वक मरण होने से दुर्गति का भाजन बना।

लालच के कारण इंसान बुद्धिहीन हो जाता है।
लालची इंसान बिल्कुल ही दीन हो जाता है।।
इसलिए कहा है लालच बुरी बला होती है विशद।
लालची इंसान अपराधों के अधीन हो जाता है।।

***

7. अब पछताए होय क्या ?

छतरपुर जिलान्तर्गत एक कस्बे में दो घनिष्ट मित्र रहते थे। एक हरीसिह जो कुछ पढ़ा–लिखा था; किन्तु पाश्चात्य सभ्यता की दौड़ में आगे था और दूसरा मित्र रामचंद जो धार्मिक और सामाजिकता के वातावरण में रहने वाले विचारों से सहित था। दोनों घनिष्ट मित्र थे। दोनों की मित्रता को देखकर लोग अटकलें करते थे। कोई कहता कि दो तन एक जान है तो कोई कहता दोनों राम लक्ष्मण समान है।

रामचन्द, हरीसिंह को धार्मिक विचारों में और सामाजिक धारणाओं में ढालने का प्रयास करता; किन्तु हरीसिंह है कि समय व्यतीत होते सब कुछ भूल जाता था। फिर रामचन्द हार ना मानते हुए हरीसिंह को सही राह में लाने के लिए प्रेरित करता रहता था। कभी–कभी तो सामने रूठकर और डाँटकर भी अनैतिक कार्यों से दूर हटाने का उद्यम करता था।

हरीसिंह जितना भौतिकवादी और बाह्य चमक–दमक के वातावरण में जीता था। उसकी पत्नी उतनी ग्रामीण और मेहनती एवं सेवाभावी थी। हरीसिंह के लिए यह पसन्द नहीं था कि वह ग्रामीण और अनपढ़ स्त्री के साथ जीवन जिए। एक दिन मित्र रामचन्द्र के पास जाकर कहने लगा– हम तो अपनी पत्नी को छोड़ना चाहते हैं तो बताइए क्या करें? उसकी नाक काटकर भगा दें या फिर उसे जान से खत्म कर दें।

मित्र रामचन्द्र ने पूछा– आखिर ये सब क्यों करना चाहते हो और इसका परिणाम क्या होगा? पहली बात उसका क्या कसूर है? बेकसूर क्यों छोड़ा जा रहा है? यदि पंचायत में बात पहुँच गई तो मजिस्ट्रेट को आप क्या उत्तर देंगे और यदि नाक काट दी गई तो नकटी औरत किसकी कहलाएगी

तथा जान से खत्म कर दिया तो जानते हैं आप कत्ल की सजा बीस वर्ष की या आजीवन कैद होती है। सुनकर वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर रह गया। अनेक प्रकार से समझाने पर उस समय तो शांत हो गया; किन्तु मन की गाँठ बाहर नहीं निकल सकी। कुछ समय बाद अपनी मूर्खतावश पत्नी को छोड़कर जाने को कहा; लेकिन पत्नी का एक कथन था कि माता–पिता ने मेरी जिन्दगी आपके चरणों में सौंप दी है तो उसका अन्त भी यहीं होगा।

इस बात से भी हरीसिंह को चिढ़ होने लगी **'विनाश काले विपरीत बुद्धि'** आखिर एक दिन क्रोध में आकर पास रखी कुल्हाड़ी पत्नी के गर्दन पर दे मारी। चीत्कार की आवाज मुँह से निकली और हरीसिंह के दोनों पैर पकड़े हुई वहीं पर लुढ़क गई। उसकी जीवन लीला समाप्त हो गयी।

सारे नगर में एक ही चर्चा थी कि बेचारी का यही दोष था कि वह मूर्ख अनपढ़ थी; किन्तु वह कैसा पढ़ा–लिखा जिसने एक मासूम और पतिभक्त देवी की बलि चढ़ा दी।

अन्त में हरीसिंह को हाथों में हथकड़ी सहित अदालत में पेश किया गया। अदालत में निर्दोष पत्नी की हत्या के जुर्म में आजीवन जेल की सजा सुना दी और हरीसिंह को जेल की सलाखों के पीछे डाल दिया गया। हरीसिंह का हरा–भरा जीवन वीरान हो गया। सजा काटने के बाद जब जेल से बाहर निकला तब तक उम्र ढ़ल चुकी थी। समय की थपेड़ों ने कमर तोड़ दी। हाथ में लाठी के सहारे चलकर आगे बढ़ता चला गया और पश्चाताप के आँसू बहाता हुआ पत्नी को जिस स्थान पर अग्नि संस्कार किया गया था। वहाँ पर पड़े पत्थर पर सिर पटक–पटक कर अपनी जीवन लीला समाप्त कर दी।

***

8. पुण्य–पाप की महिमा

उत्तर प्रदेशान्तर्गत जिला झाँसी के समीप श्री दिगम्बर अतिशय क्षेत्र करगुंवाजी में आचार्यश्री विरागसागरजी महाराज का ससंघ मार्च सन् 1999 में श्री मज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक एवं गजरथ महोत्सव सम्पन्न हुआ। पश्चात् वहीं से सभी संघ यथायोग्य विहार करते हुए चल रहे थे। मुनिसंघ का विहार टीकमगढ़ की ओर चल रहा था। रास्ते में देखा कि कुछ भील वृद्धाएँ सिर पर लकड़ी का बोझा रखे बस्ती की ओर जा रही थी तभी साथ में चल रहे मुकेश ने कहा कि महाराज जी देखो ये वृद्धा जिसकी चलने की सामर्थ्य नहीं है फिर भी लकड़ी का बोझ सिर पर रखकर ले जा रही थी।

मुनिराज ने तुरन्त ही उत्तर दिया– यह लकड़ी का बोझ नहीं कर्म का बोझ ढो रही है। इन्होंने पूर्व में कोई भी सत् कार्य नहीं किया है बल्कि कर्म का भार उठाया है इसलिए आज बोझ ढोकर चल रही है।

इसके बारे में विचार करो, इन लोगों की जिन्दगी क्या है? जिनके लिए खाने को दो समय का भोजन मुश्किल से प्राप्त होता, पहनने के लिए वस्त्र नसीब नहीं होते। सुबह से उठकर जंगल में कंटीली झाड़ियों और पथरीली राहों पर लकड़ियाँ काँट–छाँटकर तैयार करती हैं। पहाड़ी पर जहाँ से खाली चलना मुश्किल होता है वहाँ से बोझा सिर पर लेकर चलकर दो–तीन मील तक ले जाती हैं। बस्ती से घूम–घूम कर आवाज देती हैं– कोई लकड़ी खरीद लीजिये और उनसे पूछा कितने की लकड़ी देंगे। यदि वह दस रु. कीमत बताती हैं तो लोग तुरन्त ही कहते हैं सात रु. ले लो, कभी कहते हैं आठ रु. ले लो, नहीं तो जाओ। यदि शहर में रहने वाली आपके परिवार की

स्त्रियों से कहा जाए कि जहाँ जंगल से यह लकड़ियाँ काटकर लाँ हैं वहाँ से आप लकड़ियों का वही बोझा ले आइये। आपको आठ सौ रु. दिये जाएंगे तो भी शायद कोई भी स्त्री तैयार नहीं होगी। यदि तैयार होगी तो लाने में सफल नहीं होगी।

यदि कदाचित् आठ सौ कदम पैदल चलने का अवसर आ जावे तो 8 घण्टे वाहन का इन्तजार तो कर लेंगे; किन्तु अठारह मिनिट का रास्ता पैदल चलकर तय नहीं कर सकती है। कभी रिक्शा पर बोझ बनकर चलती हैं तो कभी तांगे पर बोझा बनकर चलती हैं। यही अन्तर है एक सिर पर बोझ रखकर चल रही है तो दूसरी औरों के सिर को बोझा बन रही है। यही पुण्य और पाप का फल है या खेल है।

पुण्य के फल से इंसान को सांसारिक सुखसाता, वैभव तो प्राप्त होता ही है साथ ही यदि उस पुण्य के फल में लिप्त ना होकर स्वयं का उत्थान चाहे तो पुण्य उसे मोक्ष की सामग्री भी प्रदान करता है। कहा भी है–

सम्मा इट्ठी पुण्यण होई, संसार कारणं णियमा
मोक्खस्स होई होउ,, जदि णिदाण रहिदेण।।

किन्तु पाप के फल से इंसान को असाता पीड़ा और तिरस्कार प्राप्त होता है और मोक्ष मार्ग पर बढ़ने के लिए अनेकों बाधाएँ खड़ी होती हैं, कभी शांति की हीनता तो कभी अज्ञान और अक्षमता और अन्तराय सामने आ जाते हैं।

पुण्य पाप के फल से मानव, कभी हँसे कभी रोये।
पाप के फल से दुर्गति वासी, इन्द्र पुण्य से होये।।

***

9. सामाजिकता

नीमा अपने पति नेमि के व्यवहार से तो खुश रहती थी; किन्तु अपने भाग्य को हमेशा कोसती रहती। क्या बीना की तरह सुंदर सा बेटा मेरे लिए देखने को भी प्राप्त होगा या नहीं? यह सोचकर अनायास ही रो पड़ती। तभी नेमि समझाता नीमा धैर्य रखना चाहिए। अपने भाग्य में होगा तो अपने लिए भी सुन्दर सा बेटा प्राप्त होगा।

नेमि ने पूजा, भक्ति करना प्रारम्भ कर दिया जिसके फलस्वरूप कुछ दिनों बाद पुत्र प्राप्त हुआ। नीमा बहुत खुश थी। नीमा बेटे को बड़े लाड़–प्यार से रखती। कुछ ही दिनों बाद बेटा पाँच वर्ष का हो गया और स्कूल पढ़ने के लिए भेजने लगे। बेटा नयन वास्तव में नयनों का तारा था और सितारों की भाँति ही ऊँचाई की ओर बढ़ने वाला था। प्रतिवर्ष कक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त करता। नेमि और नीमा योग्य बेटे को पाकर फूले नहीं समाते थे। **'सुख की साल पल जैसी बीतती'** इस युक्ति के अनुसार समय कब व्यतीत हो गया, पता ही नहीं चला और नयन ने हाई स्कूल में मेरिट लिस्ट में प्रथम आने से सर्वोच्च पुरस्कार प्राप्त किया और अगले वर्ष कॉलेज में पढ़ने के लिए पहुँच गया और कॉलेज के वातावरण में खो गया। न घर आने का कोई समय निश्चित रहता और न घर से जाने का समय निश्चित रहता। नयन खोया–खोया सा रहने लगा। दादी हमेशा नीमा से कहती– बेटी नीमा देखो, नयन अभी तक नहीं आया। पता नहीं क्यों देर से आता है। नेमि उससे कहो समय से घर आया करो। नीमा दादी की बातों को टाल जाती है। क्या तुम हमेशा बोलती रहती हो, आखिर बेटा है कॉलेज में जाता है, कोई खेल वगैरह चलते रहते, कभी पार्टी में चला जाता है, आ जाएगा। आप तो पुराने जमाने की बात करती रहती हो। दादी ने नयन से कहा–बेटा ! तुम रात्रि में इतने लेट

आते हो, सुबह भी जल्दी चले जाते हो, कुछ घर पर भी रहना चाहिए तो नयन भी माँ के द्वारा कही बात को दोहरा दिया करता। क्या आप घर–घर की बात करती रहती हो? हमको कभी मैच देखने तो कभी पार्टी में जाना होता है इसलिए लेट होना स्वाभाविक है, दादी चुप रही।

एक दिन नयन अपने साथ एक लड़की को लेकर आया और माँ से उसके बारे में सारी चर्चा की और कहाँ– माँ यह बीना है, बहुत होशियार है, मुझे बहुत चाहती है। उसके बाद तो नयन का बाहर घूमना, देर रात तक घर आना, यहाँ तक कि कभी–कभी तो घर भी नहीं आता। दादी को पता चला तो दादी ने कहा– नीमा ! तू आखिर उस लड़की के खानदान, घर–परिवार के बारे में पता तो कर ले, कुछ ऊँच–नीच हो जाए, जवानी का अंधा दौर होता है।

नीमा ने कहा– आजकल लड़के बहुत होशियार होते हैं और फिर अपना नयन तो हमेशा मैरिट लिस्ट में प्रथम आता है। नेमि के घर आते ही दादी ने सारी बात नेमि से कहते हुए डाँटा। तुमने नीमा और नयन दोनों को बिगाड़ रखा है। उनसे कुछ कहते ही नहीं। तब नेमि ने श्वांस भरते हुए कहा– कौन, किसकी मानता है। मैं जानता हूँ कि नयन का रवैया ठीक नहीं है। आप हमेशा परेशान रहती हो पर मैं भी क्या करूँ? पाश्चात्य सभ्यता की अंधी दौड़ में सभी एक–दूसरे को पीछे छोड़ रहे हैं। नयन के दिमाग में नीमा ने यह बात अच्छी तरह बैठा दी थी कि दादी तो पुराने विचारों की है और उनकी तो बार–बार टोकने की आदत हो गई है नयन तो कुछ सोचने–समझने की स्थिति में नहीं था। यह उम्र ही ऐसी होती है। एक मनहूस शाम को नेमि हड़बड़ाए और रोते–रोते आए। माँ देखो, मेरा सब कुछ लुट गया। देखो यह पत्र नयन का है, वह आँखें फाड़कर भी अच्छी तरह से देख नहीं पा रहा थाह्र

पूज्य पापाजी एवं मम्मीजी, सादर प्रणाम !

मैं बीना के बगैर नहीं रह सकता हूँ। बीना किसी और की हो गई है। उसके पिता ने जबरन उसकी शादी मेरे सीनियर विमल के साथ कर दी है। मैंने उससे मिलने का बहुत प्रयत्न किया; किन्तु जाते समय एक बार भी नहीं मिल सका। बीना अब मेरे हृदय में उतर चुकी है, उसके बिना मैं इस संसार में नहीं रह सकता और उसके अलावा कुछ सोच भी नहीं पा रहा था। मैं स्वेच्छा से आत्म–हत्या कर रहा हूँ। आप मेरे लिए क्षमा करें। दादी से भी कहना मुझे माफ कर दे।

नीमा ने बेटे के मृत शरीर को देखा तो एकटक देखती रह गई न रो रही थी, न कुछ बोल रही थी। ऐसे चुप थी अब कभी कुछ नहीं बोलेगी। लोग नीमा को तुरन्त अस्पताल ले गये। डॉक्टर ने नींद का इंजेक्शन दिया तो नीमा सो गई। चारों ओर नयन की ही बात चल रही थी। कुछ समय बाद नीमा में हलन–चलन हुआ तो दादी माँ ने सिर पर हाथ रखकर सहलाया। उठते ही नीमा दादी माँ की गोद में सिर रखकर फूट–फूटकर रो पड़ी। साथ ही दादी भी रो रही थी। रोते–रोते नीमा ने दादी से कहा– दादी.. आपकी बात मान लेती तो कितना अच्छा होता, हमारे सामाजिक संस्कार अच्छे हैं। पाश्चात्य सभ्यता की दौड़ ने मेरा सब कुछ लूट लिया। मेरा बेटा मुझसे छिन गया। सभी से मेरी प्रार्थना है कि अपनी सामाजिक सभ्यता के अनुसार ही रहकर जीवन व्यतीत करें और सुखमय जीवन बनाएँ।

आज का इंसान पाश्चात्य सभ्यता का दीवाना होता जा रहा है।
पाश्चात्य सभ्यता की दौड़ में आर्य सभ्यता को खोता जा रहा है।।
अब इंसान के माथे पर कलंक और कुल के नाश की नौबत आने लगी है।
इस कालचक्र में फंसकर एक–एक इंसान रोता जा रहा है।।

***

10. प्रभु जब लेता है चमड़ी उधेड़ कर लेता

एक नगर में एक सेठ निवास करता था जो पूर्व पुण्य के उदय से बहुत ही धनवान था; किन्तु जितना धनवान था उससे कहीं अधिक कंजूस भी था। कभी द्वार पर खड़े हुए भिखारी को देने के लिए दो पैसे भी उसके हाथ से नहीं छूटते थे। एक बार एक घटना हुई– एक भिखारी उसके दर पर आया। सेठजी कुछ दे दीजिए। तब सेठजी ने बहाना बना दिया कि पत्नी घर में नहीं है। तब भिखारी ने कहा– पत्नी तो मेरे पास है, पत्नी नहीं चाहिए। कुछ खाने के लिए मांगता हूँ। सेठ झेंपते हुए कहता है– जाओ भाई आदमी (नौकर) नहीं है। फिर भिखारी ने कहा– थोड़ी देर के लिए आप ही आदमी बन जाईए। अब तो सेठ का पारा गर्म हो गया और डाँटते हुए कहा– चलो जाओ यहाँ से मेरे पास कुछ नहीं है। भिखारी भी कहाँ चुप होने वाला था उसने कहा– सेठजी यहाँ क्यों बैठे हो, चलो मेरे साथ हम दोनों ही एक जैसे हैं मिलकर भीख माँगेंगे। इतना कहने पर भी सेठ का दिल नहीं पसीजा, बल्कि सामने पड़ा हुआ पौंछा का कपड़ा भिखारी के सिर पर दे मारा। भिखारी पौंछा लेकर चल पड़ा। नदी में धोकर उससे बाती बनाई और दीपक जलाया तथा भावना भाई– हे परमात्मा ! जिस प्रकार दीपक की ज्योति तिमिर का नाशकर रही है उसी प्रकार अज्ञान तिरि हरण कर सम्यक्ज्ञान का प्रकाश करना।

नगर में कभी कोई संतों का आगमन होने पर सेठानी कई बार निवेदन करती मुनिराज के लिए चौका लगाकर आहार एवं शास्त्र दान करने हेतु; किन्तु सेठजी बहाना बनाकर टाल देते। सेठजी **'चमड़ी जाय पर दमड़ी ना जाए'** इन विचारों वाले व्यक्ति थे।

सभी का पुण्य हमेशा स्थिर नहीं रहता है और कहावत है– **'पुण्य की चेरी लक्ष्मी'** लक्ष्मी तो पुण्यवान के साथ रहती है। एक बार सेठ के घर में कुछ डकैत जाकर घुस गए और सेठ से संपत्ति माँगना प्रारम्भ किया; किन्तु सेठ कहाँ इतने जल्दी सम्पत्ति देने वाला था। जब डकैतों ने उसे बाँधकर उल्टा टांग दिया, फिर भी सेठ ने संपत्ति नहीं दी तब नीचे से आग जलाकर जलाना भी प्रारम्भ कर दिया। फिर भी सेठ ने सम्पत्ति नहीं दी तो आग से पड़े हुए फफोलों को नोंचकर उनमें नमक, मिर्च भरना प्रारम्भ कर दिया। आखिर में सेठ को अपनी सारी संपत्ति उन्हें देनी ही पड़ी और हुआ वही कि **'दाम भी चला गया और चाम भी चली गई'** कुछ समय बाद छटपटाते हुए सेठ का मरण हो गया।

इसलिए तो कहा है कि–**'प्रभु जब लेता है तो चमड़ी उधेड़ कर लेता है'**।

प्रभु जब देता है तो छप्पड़ फाड़ के देता है।
प्रभु जब लेता है तो चमड़ी उधेड़ कर लेता है।
यह सब कुछ पुण्य–पाप का तमाशा है।
जिन्दगी के सुख–दुःख का पुण्य ही तो नेता है।

इंसान गर्म जोशी में गलत राह पर चल जाता है।
स्वयं की जिन्दगी में स्वयं को ही छल जाता है।।
कोई बदलता है विशद सु–संस्कार पाकर के।
तो कोई ठोकरें खाकर के बदल जाता है।।

***

11. कर्म न छोड़े कोई को

भारत देश के मध्यप्रदेश में शिवपुरी जिलान्तर्गत कस्बा जो चौरासी ग्रामों का केन्द्र बिन्दु है। नगर खनियांधाना जो सारे भारत देश में प्रसिद्ध है। नगर में लगभग एक सौ पचास परिवार जैन समाज के निवास करते हैं। आस–पास के ग्रामों से लोगों का आना–जाना निरन्तर चलता रहता है। नगर में तीन जिनालय हैं। प्रथम श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर, द्वितीय श्री नेमिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, तृतीय श्री नंदीश्वर द्वीप (चेतन बाग) समीप ही करीब आठ किमी. दूरी पर अतिशय क्षेत्र गोलाकोट एवं इक्कीस किमी. की दूरी पर अतिशय क्षेत्र पचराई जी है, अतः क्षेत्रों की वंदनार्थ साधु–संतों का विहार निरन्तर होता रहता है।

नगरवासियों का अशुभ कर्म ही कहा जाए कि बीच के अंतराल में नगर में साधु–संतों का आगमन नहीं हुआ; किन्तु निश्चय पक्षधारी विद्वानों का आना–जाना हुआ। जिससे लोगों में निश्चय पंथ की धारा बह निकली। उसी बीच सन् उन्नीस सौ ब्यासी में तपस्वी सम्राट आचार्यश्री सन्मतिसागरजी महाराज का आगमन हुआ। कुछ श्रद्धालु भक्तों में मुनिराज के आगमन की खुशी थी। उसी बीच भक्तों को ज्ञात हुआ कि आचार्यश्री सन्मतिसागरजी महाराज का जन्म–दिवस समीप है अतः यह उत्सव यहीं पर मनाया जाना चाहिए; किन्तु निश्चय पक्षधारियों ने इसका विरोध किया। तब श्रद्धालु भक्तों को यह बात ज्ञात हुई कि यहाँ गड़बड़ हो रहा है; लेकिन श्रद्धालु भक्तों ने अपने सतत् प्रयास से जन्म–दिवस का कार्यक्रम उत्साहपूर्वक सम्पन्न किया।

पश्चात् उन्नीस सौ चौरासी में क्षुल्लक गुणसागरजी (उपाध्याय

ज्ञानसागर) नगर में पहुँचे तो किसी ने चौका नहीं लगाया और न ही रुकने का निवेदन किया। क्षुल्लकजी विहार कर चले गये। पश्चात् शाम को स्वाध्याय के वक्त चर्चा का विषय बना कि क्षुल्लकजी के लिए चौका नहीं लगाया गया। इतनी बड़ी समाज को धिक्कार हो जो साधु को आहार न दे सके।

पण्डित भागचंद्रजी ने श्रद्धालु भक्तों को एकत्रित कर क्षुल्लकजी के पास जाकर निवेदन किया– महाराज आप खनियांधाना में चातुर्मास कीजिए। विशेष आग्रह पर क्षुल्लकजी ने वर्षायोग किया तब यह उजागर हो गया कि निश्चय पक्षधर साधुओं का विरोध करते हैं और परिणाम यह हुआ कि श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर श्रद्धालु भक्तों का स्थान बन गया और श्री नेमिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर निश्चय के पक्षधरों का स्थान बन गया। समय–समय पर मुनि संघों का आगमन होता रहा और यह विषय अपनी गति पर गहराता चला गया। लोगों में संतों के प्रति आस्था जगती गई तो वहाँ कुछ लोग निश्चय पक्ष के कट्टर पक्षधर बनते चले गये।

सन् उन्नीस सौ पन्चानवे में आचार्यश्री चन्द्रसागरजी महाराज का पावन वर्षायोग सम्पन्न हुआ। वर्षायोग के अवसर पर विचारों में विभिन्न प्रकार से दोनों मंदिर से संबंधित लोगों में मतभेद उत्पन्न हुआ और दोनों मंदिर से संबंधित लोगों का एक–दूसरे के मंदिर जाना अधिकांशतः बंद हो गया। एक बार आचार्य चन्द्रसागरजी महाराज श्री नेमिनाथ दिगम्बर नया मंदिर की वंदना हेतु जा रहे थे। तभी निश्चयवाद के पक्षधर एक महाशय ने दरवाजे पर खड़े होकर आचार्यश्री चन्द्रसागरजी महाराज को रोक दिया। आप इस मंदिर में प्रवेश नहीं कर सकते। महाराजश्री लौटकर वापिस आ गये; किन्तु श्रद्धालु भक्तों के मन में बड़ी ठेस लगी और बात भी

कुछ ऐसी है कि **''धर्मायतन किसी की बपौती नहीं वह तो श्रद्धा के केन्द्र होते हैं और श्रद्धा किसी पंथवाद की मुँहताज नहीं होती।''** फिर श्रद्धालु भक्त जिनके पुजारी हों उन्हें ही कोई ठोकर मारने लगे। इस स्थिति में तो भक्त अपनी जान पर खेल जाते हैं। आखिर अनेक प्रकार के विवादों के बाद काफी समय बाद शांति हुई किन्तु यहाँ रहस्यमयवाद यह है कि **जो आग में हाथ डालेगा तो जलेगा ही**। अतः कहा गया है– **''स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा फलं तदीयं लभते शुभाशुभं''** अर्थात् जो जैसा कर्म करता है उसके फल को उसे ही भोगना पड़ता है और कहा भी है–

इस जनम में न सही पर भव में मिलता है।
अपने–अपने कर्मों का फल सबको मिलता है।।

किन्तु उन महाशय के लिए तो कर्म का फल इसी भव में प्राप्त हो गया। कर्म एक ऐसा शत्रु है जो तन–मन और धन तीनों से मारता है। रोम–रोम में चोट करता है हुआ भी यही उन्हें खतरनाक बीमारी हुई जिससे समय–समय पर उनके शरीर का रंग परिवर्तित होता रहता था। कभी लाल, कभी पीला, कभी नीला रंग पढ़ जाता था और लगभग तीन वर्ष तक ऑक्सीजन के सहारे पड़े रहे तन से भी मारे गये, मन से और धन से भी गये। अंत खोटी अवस्था में हुआ तो आगम यह भी कहता है कि गति भी खोटी ही प्राप्त होती है।

सिंहों को भेड़ों की तरह पाला नहीं जाता।
पारे को सांचे में ढाला नहीं जाता।
बहुत सम्हल कर चलने की आवश्यकता है।
इंसान के कर्म को टाला नहीं जाता।।

आचार्यों ने कहा–

अन्य क्षेत्रे कृतं पाप, धर्म क्षेत्रे विनश्यति।
धर्म क्षेत्रे कृतं पाप, वज्र लेपो भविष्यति।।

अन्य क्षेत्र में किये गये पापों को धर्मक्षेत्र में आकर साफ किया जा सकता है; किन्तु धर्म क्षेत्र पर किए गये पाप को धोने के लिए कोई स्थान नहीं, कोई आधार नहीं, निधत्ति और निकाचित जैसे कर्म ऐसे ही कार्यों से धर्मस्थल पर ही बंधते जो भोगना ही पड़ते हैं, उन्हें कोई टाल नहीं सकता है।

लोग दिशाहीन हैं मझधार में नावों की तरह।
हर सुबह रोशनी मिलती है छलावों की तरह।।
गति बदलते ही मति बदल जाती है लोगों की।
कर्म के फल को भोगते हैं लोग घावों की तरह।।

लोग सिर पर कर्म को बोझ लेकर चलते हैं।
कर्म उदय में लोग, व्यर्थ ही हाथ मलते हैं।।

पुण्य और पाप ही सब कुछ करता है इंसान कुछ नहीं।
पुण्य पाप में कभी आग से तो कभी दीप से जलते हैं।।

***

12. बँटवारा माँ-बाप

शहर के बाहर मंदिर के बगीचे पर पड़ी बैंच पर एक बुजुर्ग पुरुष एवं महिला अपने-अपने घर से विभिन्न दिशाओं से आकर मिलते और महिला पुरुष के साथ प्रेम से बात करती और पुरुष को कुछ खिलाती-पिलाती। पश्चात् दोनों विपरीत दिशा की ओर चले जाते। उन्हें रोज मिलता हुआ देखकर लोग जमाने को कोसने लगे। क्या जमाना आ गया है इन बुड्ढों को शर्म नहीं आती। मंदिर के बहाने आकर यहाँ मिलते हैं। आखिर मिलते-मिलते उनसे पहिचान सी हो गई और एक युवा दंपत्ति ने पास जाकर जय जिनेन्द्र करके पूछा- अंकलजी आप का निवास कहाँ पर है और यह माँ जी कौन है? क्या आप साथ में नहीं रहते। तब बुजुर्ग दादाजी ने उस दंपत्ति की ओर देखकर एक आह भरकर कहा- बेटा, तुम्हारा नाम क्या है और तुम क्या करते हो? तब दंपत्ति ने कहा- मैं राजेन्द्र कुमार जैन हूँ, समाज सुधार न्यास में सर्विस करता हूँ, यह मेरी धर्मपत्नी है, इसका नाम प्रकृति है। बहुत अच्छा है किन्तु तुमने मुझसे यह सब क्यों पूछा है ? जब राजेन्द्र ने कहा- कुछ नहीं अंकलजी यूँ ही मन में आया और पूछ लिया। बुजुर्ग दादाजी ने कहा- ठीक है, तुम जानना ही चाहते हो तो .... बैंच की ओर इशारा करते हुए कहा- बैठकर बात करते हैं।

बुजुर्ग दादाजी ने कहा- बेटा राजेन्द्र तुम जानना ही चाहते हो तो सुनो, जयपुर राज्य के रियासत में रामगढ़ लालारामजी का नाम आपने शायद सुना होगा। वह लालारामजी मेरे पिताजी थे। मेरा नाम दयाराम है, यह मेरी पत्नी ज्योति देवी है; किन्तु कर्म की विडंबना कहें या सरकार की नीति कही जाए। राजाओं के राज्य समाप्त हो गये रियासतें डूब गईं और

जो चल-अचल संपत्ति थी। उसको भी सरकार ने अपने कब्जे में ले लिया। कुछ परिस्थितियाँ आती गईं और जीवन में परिवर्तन होता गया। एम.एस.सी. करने के बाद उच्च शिक्षक के पद में कुछ समय तक सर्विस करने के बाद ट्रांसफर नगर से तीन सौ किमी. दूरी पर हो गया। माता-पिता का मोह जागृत हुआ। उन्होंने वहाँ जाने से मना कर दिया और नौकरी से स्तीफा देना पड़ा। घर पर रहकर खेतीबाड़ी के कार्य में जीवन व्यतीत हुआ। शादी हुई, दो लड़के, एक लड़की पैदा हुई। उन्हें पढ़ाने के लिए शहर में भेजा। हॉस्टल में रखकर पढ़ाया, पढ़ाई के खर्चा को पूरा करने के लिए वार्षिक आमदनी कम पड़ने लगी, कुछ खेती वगैरह बेचनी पड़ी। लड़की की शादी करने में भी कुछ यहाँ-वहाँ से इंतजाम करना पड़ा। बहुत प्रसन्नतापूर्वक जीवन व्यतीत हो रहा था। अपने आपको विजयी मान रहे थे कि कुछ भी हो अपना जीवन कैसे भी व्यतीत हुआ। किन्तु बेटों को पढ़ा-लिखाकर सर्विस में लगा दिया। यही हमारी जीवन की सार्थकता हो गई। दोनों बेटों की शादी कर दी। बेटे शहर में किराए का फ्लेट लेकर रहने लगे। जब कभी बेटों के पास जाना होता है तो यही सुनने में आता- ''किराए का मकान है। कभी बिजली की समस्या, कभी पानी की समस्या, कभी खाली करके दूसरी कॉलोनी में जाना है'' सुनकर अच्छा नहीं लगा और बात-बात पर पिताजी आप गाँव में पड़े हैं, हम कभी आ भी नहीं पाते हैं, आप भी यहीं शहर में आ जाइये।

गाँव की हवेली भी खंडहर हो रही थी। बेटों ने बार-बार आग्रह किया तो हवेली और खेत बेचकर दोनों लड़कों के लिए एक-एक फ्लेट बना दिया। दुर्भाग्य से फ्लेट एक ही कॉलोनी में प्राप्त नहीं हो सके। अतः

अलग–अलग स्थान पर लेने पड़े। कुछ दिनों तक तो ठीक चलता रहा। दो वर्ष बाद लड़के एवं बहू का मन मुकरना प्रारम्भ हुआ। पिताजी को अब कुछ दिन बड़े भाईसाहब के पास रहना चाहिए न क्या उनका कोई कर्त्तव्य नहीं है ? छोटे भाई के यहाँ से बड़े बेटे के पास गये तो देखा कुछ ही दिनों में वही स्थिति आई। अतः पापा मम्मी को छोटे भाई के यहाँ रहना चाहिए। द्वन्द्व की स्थिति बन गई। कहावत सिद्ध हुई **'धोबी का कुत्ता घर का न घाट का'** गाँव की हवेली बेचकर बेटों के लिए मकान बनवा दिए। बेटे साथ में रखने के लिए आना–कानी करने लगे। बेटी जवाई और अन्य रिश्तेदारों के पास भी सूचना पहुँच गई। सभी ने मिलकर कोई उपाय खोजा। बेटों पर दबाव डाला किन्तु दोनों ने मना कर दिया। पंचायत हुई, निर्णय लिया गया। दो बेटे हैं, एक के पास माँ रह जाए और दूसरे के पास पिता तो क्या दिक्कत है? आखिर सभी ने प्रस्ताव की स्वीकृति दे दी। हाँ, यह ठीक रहेगा। बेटा ! हम सारे जीवन में अनेक लोगों की पंचायत करते आए किन्तु धिक्कार है जीवन की दशा को कि स्वयं की पंचायत औरों के द्वारा की जा रही है और वह भी पंचायत भी परिवार की/हम पति–पत्नी जीवन भर साथ रहे, अंत में वह भी अलग कर दिया। शर्म के कारण कुछ कह भी नहीं सके यदि कहते कि अलग–अलग नहीं रहेंगे तो लोगों के मुँह को कौन पकड़ता है। कहने लग जाएंगे कि बुड्ढ़े हो गये किन्तु राग नहीं छूटता अतः मूक होकर स्वीकार करना पड़ा।

बेटा ! तुम महिलाओं की आदत जानते होगे। एक ओर बड़ी बहू के मन में शंका रहती है। कहीं माँ हमारे घर की सामग्री छोटे भाई के घर पर न दे दे, हमेशा निगरानी रखती है। यही छोटी बहू को शंका रहती है कि कहीं पिताजी कोई सामग्री बड़े भाई के यहाँ हमारे घर का सामान न भेज

दें। इसलिए एक–दूसरे के यहाँ आना–जाना बन्द कर दिया गया। न हम बड़े बेटे के घर जा सकते हैं और न ही तेरी आंटी छोटे बेटे के घर में मेरे पास आ सकती है किन्तु उसके मन में यह चिंता रहती है कि पता नहीं भोजन समय पर मिलता है कि नहीं। कभी कुछ खाने–पीने के लिए अच्छा सा कुछ खाना मिलता कि नहीं। यही चिंता उसे यहाँ तक खींच लाती है और मुझे भी ना चाहते हुए यहाँ आना पड़ता है। इसी बहाने कभी सुख–दुःख की, बीते हुए जीवन की याद करके आँखों से आँसू गिराकर मन हल्का कर लेते हैं। प्रभु का दरबार ही एक ऐसा स्थान है जहाँ पर अपने किए कर्म का रोना रो लेते हैं; क्योंकि लोगों से सुना करते हैं कि इंसान के लिए **जब सभी दरवाजे बंद हो जाते हैं तब भी एक द्वार खुला रहता है वह है संत और भगवंत का।**

कुछ समय एक साथ बैठकर चर्चा वार्ता करके अपने–अपने स्थान की ओर चले जाते हैं।

राजेन्द्र ने बुजुर्ग दादा की आपबीती को सुना तो उसकी आँखे डबडबा आईं और हाथ जोड़कर कहा– अंकलजी, आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करें। मेरे माता–पिता का स्वर्गवास हुए कई वर्ष व्यतीत हो गये, मुझे तो उनकी कुछ याद भी नहीं है। आप मेरे साथ मेरे घर पर रहें। यह मेरी पत्नी प्रकृति भी माता–पिता का प्यार नहीं प्राप्त कर पाई है। हम आप दोनों को माता–पिता मानकर रखेंगे और आपकी सेवा करके अपने जीवन को धन्य मानेंगे।

बुजुर्ग दादा दयारामजी ने लंबी श्वांस खींचते हुए कहा– बेटा ! यह दुनियाँ बड़ी जालिम है जो तुम्हारे स्वप्न को भी पूरा नहीं होने देगी; क्योंकि

जो हमारे बेटे हैं उन्हें भी संसार में, समाज में रहना है। उन्हें अपनी इज्जत की ओर भी ध्यान रखना है। लोगों के बीच में यह सुनने को कहाँ तैयार होंगे कि दयारामजी के दो बेटे होने के बाद भी किसी अपरिचित व्यक्ति के घर पर रहकर जीवन के दिन पूरे कर रहा है। अतः अपने पूर्व कर्म के फल का प्रायश्चित्त मेरे लिए पूरा कर लेने दो जिससे कर्म का कर्ज चुक जाए तो भविष्य में तो नहीं भोगना पड़ेगा। यह कहकर दयारामजी ने खड़े होकर राजेन्द्र के सिर पर हाथ रखा और बहुत देर हो गई है, यह कहकर अपने घर की ओर चल दिए। राजेन्द्र लड़खड़ाते हुए कदमों से चलते हुए दयाराम को जब तक दिखाई देते देखता रहा फिर धीरे-धीरे अपने घर की ओर चल दिया।

कई लोग हैं जो परिस्थितियों से डर जाते हैं।
कई लोग तो आत्मघात करके ही मर जाते हैं॥
इंसान संसार से डरते नहीं, संसार को डरा देते हैं।
कई वीर पुरुष राह में आने वाले काँटे साफ कर जाते हैं॥

संसार की दशा बड़ी भयानक और शर्म करने वाली है। कहा भी है-

इंसान का कर्म इंसान को रोने के लिए मजबूर करता है।
जिसे इंसान की चाहत है उससे उसे वह दूर करता है॥
इंसान वह है जो हर परिस्थिति को हँसकर स्वीकार करे।
ज्ञानी पुरुष फूल और शूल दोनों को ही मंजूर करता है॥

***

13. फैशन का फल

शायद छाया के माथे पर जन्म से ही दुर्भाग्य लिखकर आया था जो छाया बनकर चलता रहा। जन्म होने के एक माह में ही पिता का साया उठ गया और वर्ष पूरा होते ही माँ का देहावसान हो गया। बुआ ने छाया को अपने गाँव ले जाकर प्राथमिक शिक्षा दिलाई और घर के कामकाज करना सिखाया।

''समय की गति क्रियाशील है'' कुछ ही वर्षों में (छाया) सयानी हो गई तो विवाह की चिंता बुआ को हुई और गाँव के ही राजेश जो शहर में सर्विस करता था, उसके साथ छाया का विवाह कर दिया। किराये का छोटा सा मकान और राजेश ही छाया का संसार था।

सायंकाल गेट खुलने की आवाज सुनकर छाया ने पलटकर देखा- राजेश ऑफिस की फाइल लिए अन्दर प्रवेश कर रहा था। प्रसन्न होकर छाया ने कहा- आप मुँह हाथ धोकर आ जाइये मैं भोजन लगाती हूँ।

राजेश ने भोजन करते हुए छाया से प्यार से पूछा- आज कुछ उदास नजर आ रही हो, स्वास्थ्य तो ठीक है। शायद आज रोती रही या किसी की याद सता रही है, कहीं बुआ का पत्र तो नहीं आया या उनको याद कर रही हो... बोलो तो क्या हुआ, कुछ बताओ तो.. छाया की आँखों से अश्रुधारा बह निकली और खामोश होकर कहा- अकेले रहते..। तभी बाहर से शर्माजी सपरिवार प्रवेश करते हैं। राजेश ने शर्माजी का अभिवादन किया और बैठने के लिए इशारा किया। साथ ही आठ वर्ष की श्रद्धा ने जय जिनेन्द्र बोलते हुए छाया से कहा- ''मैं आपसे बुआ कहूँ तो कोई ऐतराज तो नहीं हैं।'' छाया ने दोनों बाहें फैलाकर श्रद्धा को सीने से लगा लिया। हाँ, आज से हम आपकी

बुआ और आपके पापा मेरे भाई और मम्मी मेरी भाभी हुई। शर्माजी से मिलकर बहुत अच्छा लगा। बेटी ने बुआ बनाया तो छाया को भैया भाभी मिल गये। कुछ समय में परिवार की भाँति रहने लगे। शर्माजी ने बताया– उनकी बहिन नहीं थी अतः श्रद्धा वर्षों से अपनी बुआ खोज रही थी। श्रद्धा कह रही थी– पापा मेरी यही बुआ है।

शर्माजी सीधे–साधे सच्चे इंसान हैं; किन्तु रेखा भाभी तेज तर्रार आधुनिक जमाने वाली। सभी ऐसे घुल–मिल गये कि पता नहीं चलता था। एक ही परिवार के हैं या भिन्न–भिन्न हैं। समय बीतता गया श्रद्धा हाई स्कूल पास कर चुकी थी। रेखा भाभी ने श्रद्धा को बहुत छूट दे रखी थी। शाम को लेट घर आती और ड्रेस का कहना ही क्या, देखने में बहुत भद्दी लगती थी।

एक बार छाया ने श्रद्धा के बारे में भाभी से कहा तो भाभी मुँह बनाकर बोली– दीदी जमाना बदल गया है, आप कहाँ पुराने जमाने में अटकी हैं, जमाने के साथ चलना चाहिए, कुछ मॉडर्न बनिए। छाया चुप रह गई।

एक दिन अवसर पाकर श्रद्धा को भी छाया ने समझाने का प्रयास किया; किन्तु श्रद्धा ने उल्टे छाया को समझा दिया। बुआजी जमाना कहाँ से कहाँ चला गया है, ये ड्रेस तो कुछ नहीं, मेरी सहेलियों को देखो तो आँख मींच लोगी।

शर्माजी ऑफिस चले जाते, भाभी ज्यादातर किट्टी पार्टी में व्यस्त रहती। श्रद्धा अक्सर घर पर ताला लगा देखती तो बौखला जाती; किन्तु कुछ दिनों में आदत पड़ गई। कॉलेज से सीधे छाया बुआ के पास चली जाती।

भाभी को भैया के समझाने पर कि श्रद्धा सयानी हो चुकी है। कुछ समय घर पर भी तो दिया करो और अब श्रद्धा के लिए कोई लड़का देखना

चाहिए; किन्तु भाभी की जिद हमेशा पीछे हटा देती कि अभी तो श्रद्धा की उम्र ही क्या है, श्रद्धा के लिए एम.ए. कराना है।

छाया ने भी भाभी को समझाते हुए कहा– श्रद्धा सयानी हो गई है, अब मान–मर्यादा का ध्यान रखा करो। बेटी को इतनी छूट देना अच्छा नहीं। भाभी ने व्यंग्यात्मक लहजे में कहा– अपनी घिसी–पिटी रूढ़ि अपने पास रखो। आखिर कॉलेज में पढ़ती है वह भी तो समझदार है, कोई अंगूठा छाप थोड़े ही है। श्रद्धा का एम.ए. में प्रवेश करते ही परिवर्तन हो गया। वह हमेशा खोई–खोई सी रहने लगी। उसका चहकना गंभीरता में बदल गया।

छाया ने जब रेखा भाभी से बात की तो पहले भाभी ठहाका मारकर हँसी, फिर व्यंग्यात्मक लहजे में बोली– दीदी, आप भी क्या पुराने ख्यालों में खोई रहती हो। श्रद्धा ने मम्मी से पूछा कि आकाश के बारे में बुआ को बता दें तो मम्मी ने कहा– मैंने मनाकर रखा था कि बुआ तो है पुराने विचारों की, उन्हें यह अच्छा नहीं लगेगा। श्रद्धा और आकाश एक–दूसरे को बहुत चाहते हैं। छाया चुप रह गई।

दिन–प्रतिदिन श्रद्धा का बाहर रहना, देर रात घर वापिस आना बढ़ता गया। एक दिन छाया ने भाभी से कहा– कम से कम लड़के से आप मिल तो लीजिए, उसकी जाति कुल का पता तो लगा लें, कहीं ऊँच–नीच न हो जाए। श्रद्धा की अभी कच्ची उम्र है, भाभी ने बात काटते हुए कहा– आजकल की लड़कियाँ बहुत समझदार हो गई हैं, ये आपका जमाना नहीं है, आप तो यूँ ही परेशान हो जाती हैं। आपके पिछड़ेपन की बातें अच्छी नहीं लगती। आप बुरा न माने, हम तो जमाने के अनुसार आगे बढ़ना चाहते हैं।

छाया उदास हो गई। राजेश के घर आते ही छाया ने सारी बात कह सुनाई। राजेश ने छाया को समझाते हुए कहा– आज के लोगों में सबसे बड़ी कमी है। कुछ अच्छा–बुरा सोचे बिना पाश्चात्य सभ्यता को अपनाते जा रहे हैं। एक–दूसरे को पीछे छोड़ने की होड़ में लगे हैं। भाभी भी उन्हीं में शामिल है, शर्माजी यद्यपि समझदार हैं; किन्तु उनकी मानता कौन है, हम जानते हैं आप अपनी श्रद्धा को लेकर परेशान हैं; किन्तु कर भी क्या सकते हैं।

श्रद्धा कुछ भी समझने की स्थिति में नहीं थी; क्योंकि यह उम्र ही ऐसी होती है और उसके दिमाग में यह बात बैठ चुकी कि छाया बुआ पुराने ख्यालों की रुढ़िवादी है।

एक दिन प्रातः शर्माजी (श्रद्धा के पापा) घबराए हुए रोते–रोते आए और बोले छाया दीदी मेरा सब कुछ लुट गया। ये पत्र पढ़ो यह श्रद्धा का पत्र है–

पूज्यनीय मम्मी जी एवं पापा जी, सादर प्रणाम !

मैं जा रही हूँ, मैं आकाश के बगैर एक पल भी नहीं रह सकती। आकाश का यहाँ से पूना के लिए ट्रांसफर हो गया है। वह आज ही यहाँ से निकल रहा है। मैं भी उसके साथ जा रही हूँ। आप मुझे क्षमा कीजिये। बुआ से भी 'जय जिनेन्द्र कहना' मेरे लिए क्षमा करें।

तीन दिन तक भाग–दौड़ करने पर पता नहीं चला। अचानक शाम को एम्बुलेंस आकर द्वार पर रुकी। सिपाही ने पूछा– मि. राजेश शर्मा यहाँ रहते हैं? हाँ में उत्तर देते ही सिपाही ने गाड़ी से नीचे उतरकर कहा– यह रहा आपकी बेटी का शव। इसके बैग में पड़े हुए पहचान–पत्र से इसका परिचय प्राप्त हुआ। प्लाजा होटल में अर्द्धनग्न अवस्था में कोई इसका गला घोंटकर

चला गया है। वहाँ के मैंनेजर ने जब जाकर देखा तो पुलिस को सूचना दी और हम यहाँ तक ला सके।

पुलिस ने शव को उठाकर चबूतरे पर रख दिया। रेखा भाभी ने श्रद्धा के शव को देखा तो देखती रह गई। न रो रही थी, न हँस रही थी। ऐसे चुप थी जैसे कभी कुछ नहीं बोलेगी। छाया ने राजेश की ओर इशारा करते हुए कहा– आप भाभी को अस्पताल ले जाने का इंतजाम करें। छाया भाभी को लेकर अस्पताल चल दी, आँखों से आँसू बहते जा रहे हैं। डॉक्टर ने रेखा भाभी को नींद का इंजेक्शन दिया। भाभी सो गई। छाया भाभी के पास बैठी रही। तीन घंटे बाद भाभी हिली तो छाया ने भाभी के सिर पर हाथ फेरते हुए आवाज दी। भाभी उठकर बैठ गई और आँख खुलते ही छाया से लिपट कर रो पड़ी। राजेश की आँखों से भी आँसू बरस पड़े। रेखा भाभी रोते–रोते बोली– दीदी, आपकी बात मान ली होती तो कितना अच्छा होता। हमारे भारतीय संस्कार अच्छे हैं, मॉडर्न बनने के जुनून ने मेरा सब कुछ छीन लिया। मेरी बेटी मुझसे छिन गई... हाय मेरी बेटी।

बाद में विधि विधान से, श्रद्धा का अन्तिम संस्कार कर दिया गया। श्रद्धा की स्मृति मात्र शेष रह गई।

आज का इंसान अपनी मान–मर्यादा खोता जा रहा है।
अपने हाथों अपने मार्ग में काँटे बोता जा रहा है।।
स्वयं के द्वारा किए गये अपराध के फल पर विशद।
अज्ञानी होकर इंसान रोने को मजबूर होता जा रहा है।।

***

14. लक्ष्मी की माया

एक जंगल में एक कुटिया थी। उसमें एक महात्माजी रहते थे। वे बड़े त्यागी, तपस्वी थे, कुटिया में अकेले ही रहते थे। एक दिन अचानक आधी रात को एक आवाज आई, मैं आपके पास आना चाहती हूँ। बाबाजी बोले– तुम कौन हो? आवाज ने कहा– मैं लक्ष्मी हूँ। आपकी कुटिया में निवास करना चाहती हूँ। बाबाजी बोले– मुझे लक्ष्मी की जरुरत नहीं है, मैं लक्ष्मी का क्या करूँगा? लक्ष्मी बोली– जो मुझे पाने की इच्छा करते हैं, उनके पास मैं नहीं जाती हूँ। जो मुझे पीठ दिखाते हैं मैं वहीं जाती हूँ। कहा भी है–

छाया माया एक सी, पकड़े भागे जाय।
पीठ दिखा उसके चले, वह पीछे पड़ जाय।।

बाबाजी बोले– जैसी तुम्हारी इच्छा। कुटिया के आँगन में चारों तरफ सोने की मुहरें बिखर गई। कोई भी माँगने के लिए आता, बाबाजी उसे मोहरें दे देते थे। सारे शहर में बात प्रचारित हो गई कि बाबाजी के पास में नव निधियाँ और अष्ट सिद्धियाँ हाजिर रहती हैं।

बाबाजी के आगे–पीछे लोगों का तांता लगा रहता था। बाबाजी ने सोचा– ''यह तो बड़ी बीमारी लग गई'' जब माला जपने बैठता हूँ तो माँगने वाले तैयार रहते हैं। न खाने का समय मिलता है न ही नींद लेने का। अब तो इस लक्ष्मी से कैसे छुटकारा मिलेगा?

एक दिन की बात है गाँव के ठाकुर साहब को कुछ पैसों की आवश्यकता थी। बाबाजी से परिचित एक व्यक्ति ने कहा– ठाकुर साहब ! गाँव के बाहर एक बाबाजी रहते हैं, उनके पास इतना पैसा है कि कभी टूटता ही नहीं। माँगने वालों को वे खुले दिल से मुँह माँगा धन देते हैं, ज्यों–ज्यों देते हैं, त्यों–त्यों उनकी लक्ष्मी बढ़ती रहती है। आप भी किसी कर्मचारी को भेज दीजिए। मुँह माँगी

स्वर्ण मुद्राएँ मिल जाएंगी। ये बात सुनते ही ठाकुर साहब आश्चर्य के सागर में डूब गए। उन्होंने अपने खास कर्मचारी को भेजा और कहा– तुम जाओ और बाबाजी से सरकारी खजाने के लिए स्वर्ण मुद्राएँ ले आओ।

कुछ समय के बाद एक दिन आकाशवाणी हुई– बाबाजी मैं जा रही हूँ। बाबाजी बोले– जैसी तुम्हारी इच्छा, जहाँ जाना चाहती हो वहाँ जा सकती हो क्योंकि तुम्हारा नाम ही चंचला है। एक जगह तुम्हारे टिकने का सवाल नहीं है। लक्ष्मी चली गई। बाबाजी खुश थे कि आफत खत्म हुई। दूसरे दिन ठाकुर साहब का कर्मचारी पहुँचा, याचना की। महात्माजी मुझे कुछ धन दीजिये। बाबाजी बोले– आज आप देरी से पहुँचे। कल आते तो कुछ न कुछ मिल जाता। दूसरे दिन ठाकुर साहब भी आए। बाबाजी ने सारी राम कहानी सुनाई। ठाकुर साहब ने बाबाजी को पीटना शुरू कर दिया।

ठाकुर साहब ने चिल्लाकर कहा– लक्ष्मी जा रही थी तो उसे आप मेरी हवेली का रास्ता दिखा देते। बाबाजी हँसने लगे। ठाकुर साहब ने पिटाई के बावजूद हँसने की वजह पूछी। बाबाजी ने कहा– ''मुझे हँसी इसीलिए आई कि लक्ष्मी आती है तब भी समस्या आती है और जाती है तब भी। इसलिए लक्ष्मी का एक नाम दौलत है। **लक्ष्मी जब आती है तब पीठ पर लात लगाती है जिससे आदमी की छाती फूल जाती है और जाती है तब पेट में लात मारती है जिससे आदमी की कूबड़ निकल आती है।** दौलत की ये दो लातें अच्छों–अच्छों को खानी होती हैं। बाबाजी के हँसी का राज सुनकर ठाकुर के हाथ रुक गये और बाबाजी के चरणों में झुककर क्षमा माँगने लगे। ***

लक्ष्मी अपने साथ आपत्तियाँ हमेशा लेकर आती है।
जब जाती है तो विपदा छोड़कर जाती है।।
लक्ष्मी आपदाओं का घर है प्यारे भाई।
लक्ष्मी की चाह इंसान को हमेशा ही सताती है।।

15. संस्कारों की प्रगाढ़ता

एक नगर में तीन मित्र थे। तीनों में एक आदत थी। एक की आदत थी बार–बार आँखों को खुजलाना, आँखों पर आँखें फेरना। दूसरे की आदत थी– शरीर को बार–बार खुजलाना। तीसरे की आदत हो गई थी– पानी में बार–बार हाथ डालना। ये आदतें कोई काम की नहीं थी, कोई उपयोग भी उनका नहीं था। आस–पास के लोग उन्हें टोकते पर इसका उन्हें कोई असर नहीं होता। उनकी विवशता तो संस्कार की थी। एक व्यक्ति ने एक दिन प्रस्ताव किया, तुम लोग अगर यह आदत छोड़ दो, हम तुम्हें पुरस्कार रूप में प्रत्येक व्यक्ति को एक–एक हजार रुपये देंगे। अगर एक दिन के लिये आँख नहीं मलो, शरीर को नहीं खुजलाओ और पानी में हाथ नहीं डालो तो एक हजार रुपये मिलेंगे। लोभ था रुपयों का और इधर विवशता थी आदत की, संस्कारों की। परन्तु लोभ बड़ा था, इसीलिये तीनों ने स्वीकार कर लिया।

एक व्यक्ति उन तीनों को एक नौका में बैठाकर चल पड़ा। तीनों के साथ में और कुछ लोग भी साथ में थे। चलते गये, चलते–चलते आखिर में जब उनकी स्मृति तीव्र हुई तब वह अपने आपको नहीं रोक पाए क्योंकि लोग कहते हैं– आदत आदमी को दुर्बल बना देती है, संकल्प को क्षीण बना देती है, स्मृति प्रबल हुई, संस्कार जागा, रहा नहीं गया। एक ने सोचा– क्या करूँ? ऐसे तो नहीं रहा जाएगा तो मित्र से वह बोला– मैं तुम्हें आज एक बात सुनाता हूँ, मेरा एक नाना था उसके एक बकरी थी। बकरी के कान इतने बड़े थे कि जब वह चाहती अपनी आँखों को ऐसे मल लेती। यों कहकर उसने आँख मल दी। दूसरे ने सोचा– अरे इसने तो अपना काम कर लिया। उसकी स्मृति जाग गई, उसने कहा– तुम कैसी बेवकूफी की बातें करते हो? मैं इससे भी बड़ी बात कहता हूँ। मेरे एक दादा था, इतना पहलवान था कि सुबह अखाड़े में जाता और अखाड़े की मिट्टी लेकर अपने शरीर को इस प्रकार से रगड़ता था, इस प्रकार रगड़कर उसने बता दिया।

तीसरे की स्मृति जाग उठी। उसने कहा– तुम दोनों बेवकूफ हो। कहाँ तुम्हारा मामा, दादा है। मरे हुये की क्या बात बताई जाये? उनको तो हाथ में जल लेकर श्रद्धांजलि देना चाहिये। श्रद्धांजलि के बहाने से उसने दोनों हाथ पानी में डाल दिये।

इस प्रकार वे तीनों संस्कार के वशीभूत होकर पैसा नहीं पा सके। स्मृति जब आदत के रूप में हो जाती है तब वह तीव्र हो जाती है। जब उत्तेजित होती है तब व्यक्ति सब कुछ भूल जाता है 'स्मृति' के अधीन हो जाता है, चंचल हो उठता है, क्षुब्ध हो उठता है। यह क्षोभ यह उत्तेजना और यह चंचलता सब स्मृति के कारण ही होती है।

***

आदत इन्सान को लाचार बना देती है।
आदत इन्सान को बेकार बना देती है।।
आदत से हमेशा सतर्क रहना प्यारे भाई।
आदत इन्सान को गुनहगार बना देती है।।

16. झोली भरकर धन्यवाद

एक गाँव में एक बुढ़िया रहती थी। उसके एक ही पुत्र था जिसका नाम कुल्लू था। दुर्भाग्य से वो धन के अभाव में जी रहे थे। कुल्लू बहुत दुःखी था। वह माँ से बार–बार कहता था– माँ ! हमारी गरीबी कैसे दूर होगी, आज तो हम अपना पेट भरने के लिए लाचार हो गये हैं। माँ ने कहा– बेटा ! तू अपनों से बड़ों के पास बैठ, वो तुझे कुछ न कुछ मार्ग बता देंगे। कुल्लू दुकानदारों के पास बैठा, उसने कुछ व्यापार भी सीखना चाहा लेकिन गरीबी दूर नहीं हुई। एक व्यक्ति ने कुल्लू को बताया कि यहाँ से सौ किमी. दूर एक चमत्कारी महात्मा रहते हैं, तू उनके पास चला जा, वो तुझे सारी बात, सारी हकीकत और तेरा भविष्य भी बता देंगे। तू उनके चरणों की शरण ले ले, बस तेरा बेड़ा पार हो जायेगा।

व्यक्ति की बात सुनकर कुल्लू अपनी माँ के पास गया और खुश होकर बोला– माँ, मैं उन महात्मा के पास जाना चाहता हूँ, जो मेरे भविष्य को भी बता देंगे। मुझे गरीबी से दूर कर देंगे, मेरा भाग्य चमक जायेगा और मैं खूब मालामाल हो जाऊँगा। आप तो मुझे अपना प्यार भरा आशीर्वाद दे दें। जिससे मैं हर पथ पर सफलता प्राप्त कर सकूँ।

माँ ने उसे ऊँचाइयों को छूने वाला आशीर्वाद प्रदान किया और खुशी–खुशी उसे विदा किया। कुल्लू भी माँ का आशीर्वाद पाकर चल दिया। चलते–चलते वह एक गाँव के पास आया। वहाँ एक सेठ के यहाँ रात्रि को रुका। बात चलते–चलते पता चला कि वह महात्माजी के पास प्रश्न पूछने जा रहा है। सुबह उठकर सेठानी ने कुल्लू से कहा– तुम महात्माजी के पास जा रहे हो, मेरे भी एक प्रश्न का उत्तर ले आना कि मेरी एक ही लड़की है जो बोलती नहीं है, वह कब बोलेगी? ठीक है, मैं जरूर पूछकर आऊँगा। यह कहकर वह वहाँ से निकल गया। चलते–चलते वह जंगल में पहुँचा, वहाँ उसे एक साधुजी मिले।

बेटे तुम पहुँचे हुये महात्मा के पास जा रहे हो, उनसे पूछना कि उसे तपस्या करते–करते पच्चीस–तीस वर्ष हो गये; लेकिन अभी साधुत्व का स्वाद क्यों नहीं आया ? कुल्लू ने स्वीकृति में सिर हिला दिया। आगे चलकर एक माली मिला, चर्चा के अंतर्गत उसने बताया कि तुम महात्माजी से पूछना कि मेरे पास अनार का एक पेड़ है, उसके आगे आस–पास एक भी वृक्ष फलीभूत नहीं होने का कारण क्या है?

कुल्लू ने हर्षित मन से पुनः यात्रा प्रारम्भ कर दी और वह बिना किसी कष्ट के महात्माजी के पास पहुँच गया। पहले उसने महात्माजी को अभिवादन किया, फिर बोला हे महात्मन् ! मैं आपसे कुछ प्रश्न पूछना चाहता हूँ; क्योंकि मैंने आपकी बहुत प्रशंसा सुनी है। कृपया करके आप मेरे प्रश्नों का उत्तर अवश्य दें।

महात्मा ने कहा– हे वत्स ! इस समय मैं एक साथ तुम्हारे तीन प्रश्नों का उत्तर दे सकता हूँ। जो चाहो पूछ लो। कुल्लू ने सोचा प्रश्न तो चार हैं, ये महात्माजी तीन प्रश्नों का ही उत्तर देना चाहते हैं, फिर मैं कौन सा प्रश्न छोड़ दूँ, वह समस्या से घिर गया लेकिन जो बुद्धिशाली जीव होते हैं, वे समस्याओं से घबराते नहीं है अपितु उनका समाधान ढूँढ़ते हैं।

कुल्लू ने अपने प्रश्न को छोड़कर बाकी तीन प्रश्न पूछ लिये और उनका समाधान लेकर वह उसी रास्ते से रवाना हो गया। सबसे पहले उसे माली मिला। कुल्लू ने माली का उत्तर देते हुए कहा– हे पुष्पों के मालिक ! तुम्हारे अनार के पेड़ के पास में चारों ओर धन के बड़े–बड़े कलशे गढ़े हुए हैं जब तक वे वहाँ रहेंगे तब तक वहाँ कोई वृक्ष सफल नहीं हो सकते। माली ने घड़ों को निकाला और उसमें से बहुत सा धन कुल्लू को देकर विदा कर दिया। आगे चलकर कुल्लू को वही साधु मिला। साधु ने कुल्लू को जैसे ही देखा वो भागते हुये उसके पास आये और पूछा तो कुल्लू ने कहा कि महात्मा जी ने कहा है कि जब तक तुम्हारे बालों में रत्न लगे रहेंगे तब तक तुम्हें साधु अवस्था का स्वाद नहीं आयेगा। साधु ने अपने तीनों रत्नों को निकालकर कुल्लू को दे दिया और

फकीरी भेष में वह मस्त हो गया। अब उसे परिग्रह की याद नहीं, चिंता नहीं रही। वह साधु वेष का आनंद लूटने लगा।

तीनों रत्नों को लेकर कुल्लू उसी सेठ के मकान में पहुँचा। सेठानी ने उसे खाना खिलाया और अपनी लड़की के संबंध में उत्तर माँगा। कुल्लू ने सेठानी से कहा– महात्माजी ने कहा है, तुम्हारी लड़की पति को देखकर स्वयं ही बोल उठेगी। सेठानी खुश हो गई, तभी लड़की दौड़ती हुई आई और आकर कहने लगी– माँ मुझे जोरों की भूख लगी है। लड़की को बोलता देखकर सेठानी ने कुल्लू से कहा– अब तो तुम्हीं इसके पति हो; क्योंकि तुम्हें देखकर ही आज प्रथम बार इसका वचन उच्चारित हुआ है। सेठानी ने कुल्लू के साथ अपनी लड़की की ठाठ–बाट से शादी कर दी। वह धन, माल और पत्नी को लेकर घर पहुँचा। कुल्लू की माँ चिंता करती हुई तख्ते पर लेटी हुई थी। जैसे ही कुल्लू आया कि आते ही माँ ने पूछ लिया– बेटा महात्मा ने गरीबी दूर करने के लिये क्या उपाय बताया है? कुल्लू ने कहा– माँ उपाय ही नहीं, महात्मा ने तो मेरी और तेरी सारी गरीबी को ही दूर कर दिया है। उठ करके देख, यह धन, माल खजाना, दहेज और इसके ऊपर भी तेरी पुत्रवधू।

क्या ? तू कह क्या रहा है या यों ही पागलों की तरह बके जा रहा है, कुछ सत्य कहेगा भी या नहीं। माँ ! मैं जो कुछ कह रहा हूँ, वह सत्य ही कह रहा हूँ। तो यह सब लक्ष्मी कहाँ से ले आया तू?

कुल्लू ने माँ को अपने जाने से लेकर लौटने तक की सारी घटना ज्यों की त्यों सुना दी। माँ ने बेटे की बुद्धिमता को खूब सराहा और महात्मा को भी सच्चे हृदय से धन्यवाद दिया।

परोपकार के समान कोई दान नहीं है।
परोपकार के समान कोई सम्मान नहीं है।।
परोपकारी को सब कुछ प्राप्त हो जाता है विशद।
परोपकार के समान कोई विद्वान और भगवान नहीं है।।

17. विनय भाव

एक नगर में एक सेठजी थे। वह धार्मिक, सज्जन परिवार के सदस्य थे। उनकी एक बेटी थी, वह काफी लाड़–प्यार में पली हुई थी इसलिए विवाह के पश्चात् जब वह ससुराल गई तो काफी दुःखी हुई। अरे ! मेरे पिता ने मुझे नरक में पटक दिया है, अब मेरी जिन्दगी कैसे गुजरेगी? शादी के पश्चात् पिता ने पूछा– बेटा, तेरा परिवार कैसा है? उत्तर मिला– परिवार तो **नरक** है। बेटी– तेरी सास कैसी है? उत्तर मिला **डाकिनी** है। पुनः पूछा– ससुर कैसा है? उत्तर मिला **यमराज** है। पिता ने पुनः पूछा– पति कैसा है? पति **भूत** है। ननद कैसी है तो उत्तर मिला **शाकिनी** है। पिता ने विचार किया– परिवार का एक सदस्य, दो सदस्य खराब हो सकते हैं, यह तो पूरे परिवार को बुरा कहती है। निश्चित ही मेरी बेटी में कमी होगी जो इस प्रकार बात करती है। बेटा पड़ौसी कैसे हैं? पड़ौसी तो पूरे **राक्षस** हैं। पिता ने बेटी को समझाया और कहा– मैं तुम्हारे घर परिवार को नरक से स्वर्ग बना सकता हूँ किन्तु तुम्हें एक मंत्र का पालन चार माह तक करना होगा। बेटी सहर्ष तैयार हो गई। पिता ने कहा– जब ससुराल जाओ तो सभी बड़ों के चरण स्पर्श करना, किसको किस चीज की आवश्यकता है उसे उनके कहने के पूर्व ही कर देना, बस यही तुम्हारा मंत्र है। पिता के दिये संस्कार ने बेटी का जीवन ही बदल दिया। कब सुबह होती है, कब शाम होती है, बेटी खुश ही खुश नजर आती है। कुछ समय पश्चात् पिता ने सोचा– बेटी की कोई खबर नहीं आई है, खुश है कि दुःखी है। चलो, चलकर पता करना चाहिए। पिता बेटी के घर पहुँचता है। देखा कि सारा का सारा वातावरण ही बदल गया। बेटी से कहा– मैं तुम्हें

पीहर ले जाने के लिए आया हूँ। ससुरजी ने कहा– ब्याईजी साहब बहू को कितने दिन के लिए ले जा रहे हो? पिता ने कहा– कम से कम चार–छः महीने के लिए ले जा रहा हूँ। तुरन्त ससुरजी कहते हैं– नहीं मैं अपनी बहू को चार–छः दिन से ज्यादा नहीं रहने दूँगा।

पिता ने पुनः पूछा परिवार कैसा है? उत्तर मिला– स्वर्ग है। सासु कैसी है? देवी है। पति कैसे हैं? देव पुत्र है। सुसुर कैसे हैं? देव हैं। ननद कैसी है? देवकन्या है। पड़ौसी कैसे हैं? हितैषी हैं। तब पिता ने कहा– बेटी ! विनय गुण के आते ही मानव का जीवन स्वर्ग बन जाता है।

***

अग्नि के संयोग से बर्फ क्या लोहा भी गल जाता है।
पिघला हुआ लोहा भी विशद साँचे में ढल जाता है।।
सेवा और सरलता की महिमा अपरम्परा है प्यारे भाई।
सेवा और सरलता से तो पत्थर भी पिघल जाता है।।

18. एक झूठ का भयंकर उत्पात

एक ग्राम में एक सेठ सेठानी रहते थे। दोनों में अच्छी प्रीति थी तथा सर्व प्रकार का साधन था। उनके पास एक मनुष्य नौकरी की तलाश में पहुँचा। सेठ ने पूछा– क्यों भाई ! क्या–क्या कर सकते हो? उसने कहा– जो भी आप बताएंगे, सब कर सकता हूँ। सेठ ने पूछा क्या लोगे? कुछ नहीं, वर्ष में एक दिन आपसे और आपकी सेठानी से असत्य भाषण करूँगा। सेठ ने सोचा– ऐसा मुफ्त का नौकर कब मिलेगा, यह सोचकर उसे रख लिया। वर्षभर काम कर चुकने पर वह जाने लगा, तब बोला– सेठजी अब मैं जाता हूँ, कल अपनी नौकरी लूँगा। सेठ ने कुछ ध्यान नहीं दिया।

दूसरे दिन सायंकाल जाकर सेठजी से बोला– मुझे आपका व्यवहार बहुत अच्छा लगा, पर क्या बताऊँ? यदि आपकी सेठानी आपके प्रति समर्पित होती तो दुनिया में आपका घर एक ही होता। आज वह अपने प्रेमी के कहने से आपका काम तमाम करेगी, अतः आप पूर्ण सतर्क रहें। नौकर ने यह बात इस ढंग से कही कि सेठ के मस्तिष्क में शत–प्रतिशत बात सच जम गई। अब वह सेठानी के पास गया और बोला तुम्हारी जैसी देवी मैंने आज तक दुनिया में नहीं देखी, पर खेद है कि सेठजी वेश्याओं के पास जाते रहे। इससे आप बांझ कहलाने लगी। नहीं तो क्या आज तक आपके पास कोई संतान न होती? सेठानी को भी यह बात ठीक जच गई। उपाय पूछने पर कहने लगा– आज रात्रि को जब सेठजी गहरी निद्रा में हों तब उनके एक तरफ के दाढ़ी मूंछ के बाल उस्तरे से बना डालना जिससे उनका मुँह खराब दिखने लगेगा और तब वेश्याएँ सेठजी को पास नहीं आने देंगी।

सेठानी को यह उपाय बहुत अच्छा लगा तथा उसने ऐसा करने का

निश्चय कर लिया। आज तो सेठजी शयन कक्ष में आते ही पलंग पर पड़े-पड़े खर्राटें लेने लगे। अभी रात्रि के प्रथम प्रहर की तीसरी घड़ी थी। सेठानी सुअवसर देख उस्तरे को सिल्ली पर घिसने लगी। जब उस्तरा खूब पैना हो गया तो सेठानी ज्यों ही सेठजी की दाढ़ी-मूंछ के बाल काटने को हुई कि सेठजी ने तुरन्त उठकर सेठानी की कलाई जोर से पकड़ ली। दोनों जोर से चिल्ला उठे तथा परस्पर धिक्कारने लगे। सेठजी ने उस्तरे वाले हाथ की कलाई को अभी तक मजबूत पकड़ रखा था। सेठानी सेठ से अपनी कलाई छुड़ाने की कोशिश में थी। सेठजी कहने लगे- दुष्ट यदि आज मुझे वह नौकर सावधान न करता तो तू मुझे मार डालती। वह भी बोली- बिल्कुल ठीक है, तुम आज तक वेश्याओं के यहाँ जा जाकर मुझे दुःखी करते रहे। यदि वहाँ न जाते रहते तो क्यों मैं आज तक बांझ रहती? ठीक ही कहा था उसने।

दोनों में परस्पर कलह बढ़ता देख नौकर आ पहुँचा और बोला- सेठजी क्षमा करो, अब मैं जा रहा हूँ। मेरा मेहनताना मिल गया जो मैंने कहा था कि एक बार वर्ष में आप दोनों से झूठ बोलूँगा तो बोल दिया।

सम्पूर्ण रहस्य सेठ-सेठानी को विदित हो गया और सोचते रहे कि **एक झूठ ने कितना उत्पात मचा दिया और जो जीवन भर झूंठ बोलते हैं उनका क्या होगा?**

झूठ आग की चिंगारी के समान होती है।
झूठ हमेशा पापों के बीज ही बोती है।।
झूठ से हमेशा बचकर रहने की आवश्यकता है।
झूठ सुख-चैन तो ठीक कभी-कभी जान भी खोती है।।

***

19. सच्चा पुजारी कौन?

एक पुजारी रोजाना मन्दिर में जाता और घण्टों तक घड़ियाल बजाकर प्रदर्शन के स्वर में चिल्ला-चिल्ला कर पूजन किया करता। फिर भी उसकी स्त्री सदा ही कहा करती- 'मेरा बेटा सच्चा पुजारी है।' यह सुनकर पुजारी खीझ उठता और दूने प्रदर्शन से पूजा करने लगता, तो भी स्त्री अपने पुत्र की प्रशंसा करती।

एक दिन पुजारी बिगड़ गया और स्त्री पर पक्षपात का आरोप लगाया। मुस्कराती हुई स्त्री बोली- अच्छा इसका निर्णय कल होगा। तुम दोनों अपने-अपने इच्छित भोज्य पदार्थ बता दो जिन्हें मैं तैयार कर सकूँ। बेटे ने तो सब कुछ माता पर ही छोड़ दिया पर पुजारी ने हलुवा, खीर, पूड़ी आदि पकवानों एवं मिष्ठानों की लम्बी सूची लिखा दी।

स्त्री ने सब सामग्री तैयार कर ली। जब पुजारी जी पधारे तो भोज्य सामग्री की सुगन्ध से मुँह में पानी आ गया। आज उनका मन पूजा में न था, घड़ियाल बजाते रहे, घण्टों चिल्लाते रहे पर मन उस भोजन की ओर था।

गृहणी का बेटा कहीं कुष्ट रोगियों का कोढ़ साफ कर परिचर्या में अधिक समय बीत जाने से जल्दी-जल्दी भागा आ रहा था। शीघ्रता में स्नान कर प्रभु वन्दना के लिये चला गया। आज उसने प्रतिदिन जैसी पूजा नहीं की। पाँच मिनिट में ही प्रभु के समक्ष अपनी श्रद्धा-भक्ति कर शीघ्र ही लौट आया और माता से बोला- माताजी ! भोजन परोसो। सस्नेह माता बोली- बेटा, पुजारीजी को आ जाने दो। कुछ देर बाद छाती फुलाये हुए पुजारीजी आये और गर्व मिश्रित स्वर में बोले- देखो ! तुम रोजाना कहती हो, मेरा बेटा सच्चा पुजारी है, आज पता चला है कि सच्चा पुजारी कौन है? तुम्हारे सुपुत्र पाँच मिनिट में ही सिर पटक कर मंदिर से वापिस आ गये जबकि मैं तीन घण्टे तक प्रभु पूजा में

संलग्न रहा। स्त्री बोली– भोजन कीजिए, इसका उत्तर थोड़ी देर बाद मिल जायेगा। उसने दोनों को दो–दो थालियाँ परोस दी। बेटा रूखी खिचड़ी और रोटी खाकर चटपट हाथ–मुँह धोकर यह कहता हुआ रोगियों की सेवा करने के लिए चला गया कि माता बहुत अच्छा भोजन बनाया है।

पुजारी जी ने जैसे ही ग्रास मुँह में लिया कि क्रोध से झल्ला उठे और थाली एक ओर फेंक कर उच्च स्वर में बोले– ''ये हलुवा, खीर, पूड़ी आदि किस दिन के लिए बने हैं।'' क्या मेरा अनादर करने के लिए ही मुझसे इसका नाम पूछा था जो कि इन्हें न खिलाकर यह रूखी खिचड़ी और रोटी खिला रही हो।

पुजारी जी के क्रोध से नथुने फड़फड़ा रहे थे। सान्त्वना दिलाती हुई स्नेह मिश्रित स्वर में स्त्री बोली– पुजारीजी ! अब तो आप समझ गए होंगे कि सच्चा पुजारी कौन है? वह तो जैसा मिला खाकर रोगियों की सेवा करने चला गया और आप जो सच्चे पुजारी बनने के दावेदार हैं, क्रोध से भभक रहे हैं। क्या आपने पूजा से यही सीखा है? यदि नहीं तो आप सच्चे पुजारी कैसे? क्योंकि प्रभु पूजा से तो शांति और संयम मिलना चाहिए। पुजारी जी मन ही मन पश्चाताप की ज्वाला में जलने लगे। वे अब अन्तरंग से बोल उठे– हे देवी ! तेरा कहना ठीक है।

वास्तव में प्रभु पूजा करके जो अपने जीवन में शांति, संयम और दुःखियों के दुःख दूर करने की भावना जागृत कर लेता है, वही सच्चा पुजारी है।

जिसके तन में पीड़ा सताए, उसे रोगी कहते हैं।
जिसके मन भोगों की लालसा हो उसे भोगी कहते हैं।।
योगी कहीं आसमान से उतर कर नहीं आते प्यारे भाई।
जो परोपकार और त्यागमय जीवन जिए वह योगी होता है।।

20. विश्वास नहीं होता

उत्तर प्रदेश अंतर्गत बी.एच.ई.एल. फैक्ट्री भारत में प्रसिद्ध है जहाँ बिजली के मीटर इत्यादि निर्माण करने वाले कर्मचारी निवास करते हैं।

मुनि विशदसागर ससंघ (आचार्य विशदसागर) का भिण्ड से सोनागिर झांसी होते हुए ललितपुर की ओर विहार चल रहा था। फैक्ट्री में सायं प्रवेश किया। कुछ लोग आगमन के अवसर पर उपस्थित हुए उनमें से एक सज्जन ने निवेदन किया महाराज जी कल आपका आहार कहाँ होगा? महाराज, चुप रह गये, आहार के लिए क्या कहें? पुनः वह व्यक्ति बोला– महाराज आपका आहार यहाँ नहीं हो सकता है क्या? तब मुनिश्री ने कहा– हाँ, क्यों नहीं हो सकता? पुनः वह सज्जन बोलते हैं– कोई भी मुनिश्री यहाँ आहार नहीं करते, यहाँ से बबीनाकेंट नौ कि.मी. है सभी साधु वहाँ विहार करके चले जाते हैं तब मुनिश्री ने कहा– तुम लोग निवेदन नहीं करते होंगे तो वह व्यक्ति बोला– निवेदन तो करते हैं, किन्तु यहाँ मंदिर नहीं है इसलिए कोई भी साधु नहीं रुकते। तब मुनिश्री ने पूछा कि मंदिर क्यों नहीं बनाते? यहाँ कितने जैन परिवार हैं? उन्होंने कहा– करीब सत्ताईस–अट्ठाईस परिवार रहते हैं। यहाँ से पाँच कि.मी. गाँव में मंदिर है, कभी–कभी कुछ लोग वहाँ दर्शन करने चले जाते हैं। मुनिश्री ने कहा– फिर यहाँ मंदिर क्यों नहीं बनाते? तब उन्होंने कहा– यह सरकारी कॉलोनी है तो यहाँ सरकार से अनुमति लेनी पड़ती है। एक बार मुनि तरुणसागरजी आये थे। उन्होंने जगह भी निश्चित कर दी थी तथा सरकार से अनुमति भी मिल गई थी; किन्तु कुछ लोगों ने मंदिर नहीं बनने दिया। वह कौन थे, कोई अजैन थे क्या, मुनिश्री ने पूछा ? तब वह बोले– नहीं महाराज, अजैन तो सभी सहयोग कर रहे थे किन्तु कुछ जैन

अधिकारियों ने मंदिर नहीं बनने दिया तो वहाँ पर गणेशजी का मंदिर बन गया।

विश्वास नहीं हुआ कि जैन होकर जैन मंदिर नहीं बनने दें। शायद आपको भी विश्वास नहीं होगा; किन्तु सत्य साबित हुआ। जब उन्होंने बताया कि महाराजश्री जो साहब हैं या उनकी श्रीमती है अपनी-अपनी गाड़ी लेकर जहाँ जाना है तो जाते हैं, जब आना है तो आते हैं। नहीं आये तो दो-तीन दिन तक किसी पार्टी या क्लब में आनंद मनाते रहते हैं। कोई कहने वाला नहीं है, कभी वह अपने गाँव जाते तो माता-पिता कहते कि बेटा मैं भी कुछ दिन के लिए तेरे साथ चलूँगा तो वह बड़े हर्ष के साथ कह देते हैं- हाँ, बहुत अच्छा होगा आप हमारे साथ रहोगे तो ध्यान भी होता रहेगा और मन भी लगा रहेगा। आप अवश्य चलें, किन्तु वहाँ पर मंदिर नहीं है तो माता-पिता मना कर देते हैं और साहब की या मैडम की अपनी स्वच्छन्द प्रवृत्ति चलती रहती है किन्तु मंदिर बन जाएगा तो उनका बहाना समाप्त हो जाएगा और माता-पिता आ जाएंगे तो उनकी स्वच्छंदता मिट जाएगी इसलिए वह मंदिर में सहयोग की बात तो दूर किसी हाल में मंदिर नहीं बने यह प्रयत्न करते हैं।

प्यारे भाई ! ऐसे लोगों को क्या कहा जाए जिनका अपने माँ-बाप और धर्म के प्रति यह ख्याल है ? क्या वह सच्चे इंसान कहलाने के भी काबिल हैं ? जिन पुत्रों को अपनी जीवन की सारी खुशियाँ देकर बढ़ाया, सारी सुविधाएँ देकर योग्य बनाया उन माता-पिता के प्रति उनका यह ख्याल; वह सपूत हैं या कपूत, आप स्वयं ही निर्णय कर सकते हैं।

***

21. जिद का दुष्परिणाम

राजस्थान प्रदेशान्तर्गत श्याम नगर गाँव में एक दिन कलेक्टर का आगमन हुआ। कलेक्टर का आगमन सुनकर सभी ग्रामवासी एकत्र होने लगे। लोगों ने कलेक्टर साहब का अनेक प्रकार से सम्मान किया गया। अपनी-अपनी माँगों को लोगों ने कलेक्टर साहब के समक्ष रखा। कलेक्टर साहब ने आश्वासन दिया। हम आपकी आवश्यकताओं को अवश्य पूर्ण करने का प्रयत्न करेंगे। यह सारा दृश्य नगर के किसान की पुत्री कमला ने देखा तो वह भावुक हो गई और उसने संकल्प कर लिया। चाहे कुछ भी हो ''मैं तो कलेक्टर से शादी करूँगी'' उसने लोगों से कहना प्रारम्भ कर दिया। लोग हँसने लगे- यह पागल हो गई है। उसने पढ़ने का भी प्रयत्न किया। पढ़-लिखकर एक ऑफिस में बाबू की सर्विस कर ली। समय व्यतीत होता गया और उम्र निकलती रही; किन्तु कमला की शादी नहीं हो सकी। माता-पिता ने परेशान होकर अनेक प्रकार से समझाने की कोशिश की किन्तु कमला के सामने एक नहीं चली। कुछ दिनों बाद पिता का देहांत हो गया। माँ बेचारी अकेली रह गई, हमेशा रोती रहती। मैंने सोचा था कि बेटी के हाथ पीले करूँ किन्तु यह सोचते-सोचते पिता चल बसे। शायद मैं भी यही सोचते-सोचते चली जाऊँगी वहीं देखते-देखते कमला तैंतीस वर्ष की हो गई। अब तो कलेक्टर के साथ शादी का सपना कमला का भी टूट चुका था। अंत में एक दिन हारकर माँ की गोद में सिर रखकर रो पड़ी। माँ मैं क्या करूँ... माँ मैं क्या करूँ? इसके अलावा कोई शब्द नहीं निकले उसके मुख से। माँ तो माँ होती है, माँ ने सिर पर हाथ फेरते हुए बेटी को समझाया। बेटी तेरी जिद ने तेरी जिन्दगी को मिटा डाला। अब भी मान जा अपनी हठ छोड़ किसी अच्छे से

लड़के के साथ तेरी शादी कर देते हैं। कमला ने मौन स्वीकृति दे दी तब तक बहुत देर हो चुकी थी। पैंतिस वर्ष की उम्र तक अच्छे लड़के कहाँ बैठे रहने वाले होंगे? उनकी तो इक्कीस से पच्चीस-छब्बीस वर्ष में ही शादी हो जाती है। आखिर पड़ौसी गाँव भीकमपुर में जमींदार के यहाँ ट्रेक्टर चलाने वाला सोहन उसकी उम्र छत्तिस वर्ष की थी किन्तु शादी नहीं हुई थी। देखभाल कर उससे कमला की शादी हो जाती है। शराबी सोहन शराब के नशे में आकर कमला के साथ क्या-क्या ज्यादती नहीं करता होगा, आप सोच सकते हैं। आखिर 4-5 वर्षों तक नरक के समान जीवन व्यतीत हुआ। इस बीच 2 बच्चे कमला के हुए। उन बच्चों की परवरिश का भार भी, कमला को नौकरी करनी पड़ी। मासिक वेतन मिलते ही सोहन आता और कमला से सारे रुपये छीनकर शराब पी डालता। कमला किसी पड़ौसी से उधार माँगकर स्वयं पेट भरती, बच्चों का पेट पालती और आने वाले अपने पति के लिए भी रोटी डालती अंत में सब कुछ बिगड़ता गया। जब अति हो गई तो कमला को अपना घर छोड़कर पीहर जाना पड़ा और पति होने पर भी वैधव्य जीवन व्यतीत करना पड़ा। जिद का दुष्परिणाम बड़ा ही खतरनाक साबित हुआ इसलिए कहा गया है इंसान को अपनी औकात, योग्यता का ध्यान रखते हुए ही कार्य करना चाहिए वरना अंत में पश्चाताप के अलावा कुछ भी हाथ नहीं आता है।

आदत इंसान के जीवन को निस्सार बना देती है।
फूल सी जिन्दगी को भी भार बना देती है।।
'विशद' आदत के कायिल नहीं होना जिन्दगी में।
आदत इंसान को गुनाहगार बना देती है।।

***

22. प्रभु देता है तो छप्पर फाड़ के देता है

काशीपुरा ग्राम में मनोहर प्रसाद जी निवास करते थे। उनके पड़ौस में ही मोतीलालजी जो पूर्व की पुण्यहीनता के कारण निर्धन थे किन्तु बहुत ही संतोषप्रिय थे। उनकी पत्नी सुशीला फैशन की दीवानी एवं घूमने में आनंद मानने वाली थी किन्तु गरीबी के कारण उसकी इच्छाएँ कुंठित होती रहती थी तथा पड़ौसी वर्ग को देखकर निरन्तर जलती थी और अपने पति मोतीलाल के लिए आए दिन भला-बुरा कहती रहती थी। हमेशा पैसे का रोना रहता था; किन्तु मोतीलाल शांति से बात को टालकर उसे समझाकर चला जाता- जो अपने भाग्य में होगा वही मिलेगा। किसी को देखकर परेशान होने से कुछ मिलने वाला तो है नहीं। फिर अपने परिणाम खराब करने दुःखी होने से क्या लाभ? किन्तु ख्वाबों में खोई रहने वाली सुशीला को कहाँ- संतोष होने वाला था। एक बात और है कि सुशीला हमेशा पड़ौसियों से तकरार किया करती थी। कोई भी पड़ौसी उससे मित्रता का व्यवहार नहीं रखता था। मोतीलाल बेचारा सुबह भोजन करके गाँव-गाँव जाकर व्यापार करता किन्तु दो समय की रोटी ही बड़ी मुश्किल से पूरी हो पाती थी। एक दिन मोतीलाल व्यापार के बाद लौटकर घर आ रहा था तो पुनः उसके पैर में पत्थर की चोट लग गई। मोतीलाल जब व्यापार से लौटता तो प्रतिदिन उसका पैर पत्थर से टकराया करता था। एक दिन तो उसने विचार कर लिया। आज इस पत्थर को उखाड़कर अलग करके ही आगे बढ़ूँगा। वह पत्थर को उखाड़ने लगा, मिट्टी अलग करते-करते जब पत्थर को उठाया तो देखा कि नीचे स्वर्ण मुद्राओं से भरा हुआ एक घड़ा रखा है। मोतीलाल देखकर घबरा गया। पता नहीं

किसका धन रखा और पर-संपत्ति पत्थर बराबर होती है। यह मानकर उसी पत्थर से उसे ढककर बंद कर दिया और चारों ओर से मिट्टी डाल दी। कहा भी है-

''मातृवत् परदारेषु पर द्रव्येषु लोष्ठवत्।''

घर पहुँचते ही पत्नी ने पूछा आज बहुत लेट हो गये आने में। आज तो अच्छा व्यापार चला होगा? बताइये क्या कमाकर लाए हैं? मोतीलाल ने कहा- आज तो कोई व्यापार नहीं चला। सुनते ही सुशीला आग-बबूली होकर बड़बड़ाने लगी। रोज-रोज यूँ ही चले आते हैं, कभी-कभी मन में आता है कि आज धंधा अच्छा चल गया होगा, पैसे मिल जाएंगे किन्तु रोज-रोज का वही रोना आज धंधा नहीं चला, पैसा नहीं मिला, निठल्ले कहीं के। अरे ! तुमसे अच्छे वह मजदूर हैं जो रोज मजदूरी करके सौ रुपये कमाकर लाते हैं। सुनते-सुनते मोतीलाल से नहीं रहा गया। तब उसने कहा- क्या सुशीला तू भी हमेशा पागलों जैसी बातें करती है, समझाते-समझाते वर्षों हो गए। अपने पुण्य-पाप पर भरोसा रखना चाहिए और को देखकर मन में ईर्ष्या रखने से कर्म ही बंधते हैं, कोई लाभ नहीं होता। देख मैं तो औरों की संपत्ति को मिट्टी जैसा मानता हूँ। अभी रास्ते में आते समय एक पत्थर से मेरा पैर टकराया था। मैंने सोचा पत्थर उखाड़कर फेंक दूँ। पत्थर उखाड़ते ही सोने के सिक्कों का घड़ा रखा था, मैंने सोचा पता नहीं किसका है? मैं तो पत्थर मानकर वहीं छोड़ आया, हाथ भी नहीं लगाया। सुनते ही सुशीला जोर-जोर से रोने लगी। अरे, आपके जैसे बुद्धू भी कोई हों, वहाँ जंगल में थोड़े ही कोई रहता है, वह साथ ले आते तो अपने दिन बदल जाते। चलो बताओ, कहाँ पर था? आपको पाप लगता है, आप नहीं छूना, हम उठाकर ले आएंगे, कहाँ

पर पड़ा था धन? मोतीलाल ने बता दिया, रास्ते में नीम का पेड़ है उसके नीचे एक बड़ा सा पत्थर है, उसी के पास ठीक रास्ते में। यह सारी चर्चा पड़ौसी प्यारेलाल भी सुन रहा था। उसने सोचा यह सुबह धन लेने जावे उनसे पहले हम रात में ही धन खोद कर ले आते हैं और टॉर्च लेकर चल देता है। स्थान पर पहुँचकर खोदना प्रारम्भ किया। पत्थर अलग करते ही घड़े में हाथ डाला कि बिच्छू ने काट लिया। प्यारेलाल जोर से चीखा, उसने सोचा कि मोतीलाल से अपनी लड़ाई चल रही है इसलिए उसने यह साजिस रची है, इसमें बिच्छू रखकर धन का बहाना कर दिया है। अब मैं देखता हूँ, सारे बिच्छू उस मोतीलाल और उसकी पत्नी सुशीला के ऊपर ही डालकर उन्हें कटवाऊँगा। उसने धीरे से घड़ा को उखाड़कर सिर पर रखा और जहाँ मोतीलाल अपनी पत्नी के साथ सोता था उसी स्थान का छप्पर अलग करके घड़े का धन नीचे गिरा दिया। उसमें बिच्छू था वह तो लकड़ी के सहारे दूर भाग गया और स्वर्ण मुद्राएँ उसके घर में चारों ओर बिखर गईं।

मोतीलाल और उसकी पत्नी ने खुश होकर वह धन एकत्र कर लिया। शायद मोतीलाल की न्यायवृत्ति का फल और संतोष का फल कि उसके घर में धन बरस गया इसलिए कहा जाता है- **प्रभु जब देता है तो छप्पर फाड़कर देता है।**

प्रभु महिमा मेरे बंधु बड़ी निराली है।
रंक को भूप राजा को रंक जो करने वाली है।।
प्रभु जब देते हैं तो छप्पर फाड़ कर देते हैं।
वह मिलता उसे ही है विशद जो भाग्यशाली है।।

***

23. न चेतन का न तन का

राजस्थान प्रान्तान्तर्गत श्यामपुर नगर में सेठ भोलाराम बड़े ही भोले स्वभाव वाले थे। सरल स्वभावी थे। कहा गया है– **''सरल स्वभावी होय ताके घर बहु संपदा''** सेठ भोलाराम बहुत धनवान धर्मात्मा जीव था। धर्म और सरलता का फल तन–मन–धन से सुखी था। कहा भी है–

पाते धर्मी जीव सब, सुख–शांति आनंद।
पल–पल दुख पाते विशद, जो होते स्वच्छंद।।

रहने को बंगला, स्वजन–परिजन का स्नेह, अनेक नौकर कार्य करते थे। नगर के समीप कारखाना जिसकी प्रसिद्धि से नगर की पहिचान होती थी। सेठ भोलाराम का पुत्र सुकुमाल बड़ा ही आज्ञाकारी था और पितृ वत्सल था। हमेशा पिता के किए उपकारों के प्रति कृतज्ञ रहता था। संसार का परिणमन ध्रुव है कोई बदल नहीं सकता। सेठ भोलाराम वृद्ध होकर शांतभाव से मरण को प्राप्त हो गये। सेठ के मरण की सूचना बिजली की भाँति फैल गई। लोग सेठ की अंतिम यात्रा में उमड़ पड़े। लोगों के मुख पर एक ही चर्चा थी। सेठजी का जीवन देवपुरुष जैसा था। पिता पुत्र की प्रशंसा सुनकर फूला नहीं समाया और उसने घोषणा कर दी कि उनके कारखाने में सेठ भोलाराम का स्टेच्यु बनाया जाएगा। प्रथम वर्षगांठ पर स्टेच्यु बनकर तैयार हो गया किन्तु देखा कि सेठ भोलाराम देव बनकर उसी स्टेच्यु में रहने लगे और समय–समय पर रात्रि में फैक्ट्री के विभिन्न स्थानों पर घूमते नजर आते। यह देख कर्मचारियों में हलचल मच गई। सभी के द्वारा सुना जाता– सेठजी भूत बन गये, कारखाने में घूमते नजर आते है, लोग घबराए और एक–एक करके कर्मचारियों ने काम करना बंद कर दिया। सेठ पुत्र सुकुमाल बड़ा परेशान होने लगा। आखिर कर्मचारियों

के अभाव में कारखाना कैसे चले? बहुत प्रयत्न करने पर भी कोई कर्मचारी काम करने को तैयार नहीं होता। तब सुकुमाल ने एक तांत्रिक को बुलाया और कारखाने में घूमने वाले की जानकारी की। तब तांत्रिक ने कहा– आपके पिता सेठ भोलारामजी व्यंतर बनकर इस स्टेच्यु में निवास करने लगे हैं। वही रात्रि में अपना पूर्व रूप बनाकर यत्र–तत्र घूमते नजर आते हैं। सुकुमाल ने तांत्रिक से इनको कहीं अलग करने का उपाय बताइये। तब तांत्रिक ने कहा– इसके लिए अनुष्ठान करना होगा जिसमें करीब पच्चीस हजार का खर्चा करना पड़ेगा। हम व्यंतर को एक मटकी में बंद करके यहाँ से ले जाएंगे और श्मशान में गाड़ देंगे या सुअर गृह में गाड़ देंगे फिर कभी यहाँ आते नजर नहीं आएंगे। सेठ पुत्र सुकुमाल ने जरा भी कुछ सोचे बगैर कहा– ठीक है। आप आज ही काम कर दीजिए तब तांत्रिक ने कहा– नहीं, तीन दिन का समय लगेगा। तब कहीं यह काम हो पाएगा। तांत्रिक पच्चीस हजार रु. लेकर सेठ भोलाराम की भटकती आत्मा (व्यंतरदेव) को घड़े में बंदकर श्मशान में ले गया और गाड़ दिया।

लक्ष्मी चंचल है दुनिया में किसी की नहीं होती है।
जब तक रहती है तो चैन खोती जाती है तो चाम खोती है।।
लक्ष्मी की महिमा बड़ी विचित्र है प्यारे भाई जमाने में।
लक्ष्मी पाके दुनियां कभी हँसती है तो कभी रोती है।।

सारांश यह है कि इन्सान न तन का सगा है और नही चेतन का सगा है। इन्सान स्वार्थ का सगा है, जब स्वार्थ बिगड़ने लगता है तो अपने पिता को भी नहीं छोड़ता, सुअर गृह में गड़वा देता है।

***

24. जीवन की तपस्या व्यर्थ गई

सेठ मुरारीलाल नगर के प्रसिद्ध श्रेष्ठी अपने समय के जाने–माने श्रावक थे। उनके दो पुत्र जिनेश और राजेश थे। जिनेश की शादी जिनमती के साथ हुई थी। शादी के कुछ ही वर्षों में जिनमती के पुत्र प्रसव के अवसर पर पुत्र एवं पत्नी का मरण हो गया, दोनों में से किसी को नहीं बचा सके। राजेश शहर में पढ़ने गया। वहाँ पर मित्रों के साथ कुसंगति में पड़ने से शराब पीने का आदी हो गया। पढ़ाई छोड़कर अपने गाँव में आकर खेती–बाड़ी का काम देखने लगा। संपत्ति और सम्मान प्राप्त श्रेष्ठी मुरारीलाल के पुत्र से कौन संबंध नहीं बनाना चाहेगा। कुछ ही दिनों में राजेश की शादी पड़ौसी नगर के सेठ प्रभुलाल की पुत्री कुसुम के साथ हो गई। शादी के कुछ वर्षों बाद राजेश और कुसुम की चर्चा सड़कों पर आने लगी। आये दिन राजेश शराब पीकर आते ही कुसुम की मार, पिटाई करता, कभी कोई शराब के लिए पैसे छीन लेना, यहाँ तक कि गहने भी ले जाकर बेच देना खुलेआम हो गया। सेठ मुरारीलाल एवं भाई जिनेश अपने आप पर अपनी ख्याति पूर्वजों की परम्परा और सम्मान की याद करके रो पड़ते किन्तु राजेश अपनी धुन में ही मस्त रहता था। कुसुम ने एक पुत्र विमल को जन्म दिया और कुछ ही दिनों बाद उसका मरण हो गया। शायद शराब के पाप ने अपना प्रभाव दिखाना प्रारम्भ कर दिया, कुछ ही दिन व्यतीत हुए कि राजेश को टी.वी. की शिकायत हो गई। दिनभर घर में पड़ा खांसता रहता, उसके पास में भी कोई जाना पसंद नहीं करता। इसी बीच एक और पहाड़ टूटा कि जिनेश के पिता को वृद्ध अवस्था में दिल का दौरा आने से उनका स्वर्गवास हो गया। एक और स्तंभ समाप्त हो गया।

यहाँ राजेश की बीमारी दिन प्रतिदिन बढ़ती गई और अधेड़ उम्र में ही मरण हो गया। बेटा विमल की पहले ही बड़ी समस्या थी, क्या करे क्या न करें किन्तु अब तो नाम का सहारा ही समाप्त हो गया।

जिनेश ने विमल के अंदर विशेष योग्यता देखी और विमल को एक बड़ा इंसान बनाने का मन में संकल्प किया और पढ़ने के लिए शहर भेज दिया। विमल अपनी योग्यता, क्षमता से अधिक मेहनत करके योग्यता प्राप्त करता है। वहाँ जिनेश विमल की पढ़ाई के लिए जब कमाई उपयुक्त नहीं हो पाई तो खेती की जमीन समय–समय पर बेचता रहा, यहाँ तक कि गहना भी बेचना पड़ा और शहर में रिक्शा चलाकर आजीविका प्राप्त करते हुए विमल को एम.बी.बी.एस. कराई। डिग्री लेकर विमल अपने बड़े पिताजी के हाथ में देता है तो जिनेश फूला नहीं समाता। जिनेश की आँखों से खुशी के आँसू छलक आए। उसे लगा मेरी मेहनत सफल हो गई। जिनेश ने विमल से कहा– बेटा अब गाँव में चलकर प्रेक्टिस करें तो ठीक रहेगा किन्तु विमल ने कहा– पिताश्री आज का जमाना पैसे का है, गाँव में क्या मिलेगा? शहर में पैसा, सम्मान, इज्जत सब कुछ मिलेगी किन्तु जगह तो चाहिए क्लीनिक हेतु जिनेश ने गाँव की हवेली बेच दी और विमल ने शहर में प्रेक्टिस प्रारम्भ कर दी। देखते ही देखते शहर का जाना–माना डॉक्टर हो गया। अनेक नौकर कार्य करने लगे। शादी भी बड़े धूमधाम से, ठाट–बाट से प्रोफेसर लक्ष्मीचंद की बेटी सुमन से हो गई। सुमन स्वभाव से अहंकारी थी, उस पर भी प्रोफेसर की बेटी और डॉ. की पत्नी फिर तो अहंकार का कहना ही क्या? समय व्यतीत होने पर सुमन ने एक पुत्र, एक पुत्री को जन्म दिया। बड़ी खुशियाँ छाई। सुमन हमेशा अनेक पार्टियों में मग्न रहा करती। यहाँ जिनेश

की उम्र ढ़लती जा रही है और एक दिन खांसी के साथ कुछ रक्त के कण थूकने में निकले। डॉक्टर को चैक कराने पर पता चला कि जिनेश को टी.बी. की शिकायत है। मन घबराया किन्तु उसके मन में यह भी संतोष आया। मैंने विमल को डॉक्टर जो बनाया है वह अवश्य ही मेरे लिए ठीक कर देगा। जिनेश की बीमारी जानकर सुमन ने जिनेश को पीछे बरामदे में पलंग डालकर ठहरा दिया और बच्चों को दादाजी के पास न जाने का आदेश दिया। धूप और लू की थपेड़ों से सारा शरीर जल जाता किन्तु करे भी क्या? एक दिन विमल से कहा तो विमल ने नौकर को आदेश देकर कूलर का इंतजाम करा दिया।

एक दिन अंदर मकान में सुन्दर तैयारी चल रही थी ।तभी नौकर मदन ने कहा– अरे दादाजी, आप यहाँ बैठे थे, आज पोते का जन्म–दिवस है, आप गये नहीं। जिनेश का दिल धक करके रह गया। सुबह से कुछ खाया–पिया भी नहीं था। चाय पीने की इच्छा हुई, उठकर अंदर घर की ओर चल देता है। अंदर पहुँचते ही लोगों ने पूछा– अरे विमल, ये कौन है? तब विमल ने कहा– कोई लावारिस पेशेंट है, मेरी बीबी को रहम आ गया तो इसे घर पर रख लिया। कुछ ही दिन का मेहमान है, जिनेश के कानों में यह शब्द पड़ते ही होश उड़ गए और अचानक मुख से निकला– **मेरी तपस्या व्यर्थ हो गई** और धड़ाम से नीचे गिर गया और प्राण पखेरू उड़ गये।

***

25. क्या जिन्दगी है?

रामनगर, जिला सागर में मध्यप्रदेश श्यामकिशोर के द्वार पर एक लड़की आकर खड़ी हुई। उसने द्वार पर लगी घंटी का स्विच दबाया। अंदर घंटी बजते ही सेठ की पत्नी सरला एवं बेटी अर्पिता ने बाहर आकर देखा। एक मासूम सी लड़की द्वार पर खड़ी है, उसने सरला एवं अर्पिता के पैर छुए और कहा आंटी जी माफ करना मैं काम की तलाश में यहाँ आई हूँ। क्या मेरे लिए कोई काम मिलेगा? अर्पिता ने माँ से कहा– इतनी छोटी सी लड़की क्या काम करना जानती होगी?

सुनकर लड़की ने कहा– दीदी मैं काम करना जानती हूँ। देखो आप और देखते ही देखते बुहारी करके पौंछा लगा दिया, सामने पड़े बर्तन एकत्रित करके साफ करना प्रारम्भ कर दिया, कपड़े भी उठाकर धो दिए। अर्पिता उसकी ओर देखती ही रह गयी और उस दिन से रोज लड़की चीना काम करने के लिए आने लगी। चार वर्ष व्यतीत हुए होंगे कि एक दिन चीना ने कहा– आंटीजी में दो–तीन दिन काम पर नहीं आऊँगी, उसकी बात में कुछ लज्जा थी। सरला ने कहा– क्या बात है, चीना कहीं जाना है क्या? तब चीना ने चेहरा नीचा करके कहा– मेरी माँ ने मेरी सगाई पक्की कर दी है इसलिए दो–तीन दिन के लिए नहीं आ पाऊँगी।

कुछ दिनों बाद चीना की शादी हो गई वह काम पर नहीं आई। ससुराल से वापिस आने के बाद देखा उसके सिर में माँग भरी है और अब वह एक गृहणी बन गयी है। एक वर्ष के अन्दर ही वह माँ बन गई किन्तु कुछ ही दिनों में उसका गृह उजड़ गया। उसका पति शराब पीता था, रास्ते से घर की ओर जा रहा था, एक ट्रक के टक्कर देते ही उसकी मौत हो गई। चीना

तीन दिन रोकर अपने पति की मानो याद सी ही भूल गई और मजदूरी करके अपनी आजीविका करके बेटी के साथ ही रहने लगी। लगभग आठ–दस वर्ष व्यतीत हुए कि चीना का भी बीमारी के कारण मरण हो गया। चीना की बेटी मीना भी अनाथ होकर घूमने लगी। लोगों के द्वारा द्वार पर फेंके गये रोटी के टुकड़े आदि खाकर जीवन चलाने लगी तथा किसी सज्जन की दया की लाचार बनकर वस्त्र पाकर जीने लगी।

पुनः एक बार सरला के द्वार से घण्टी बजने कि आवाज आई और बाहर आकर देखा कि लड़की खड़ी है, वह कह रही है– माँ जी कुछ काम मिलेगा, उसकी आवाज सुनकर सरला के मस्तिष्क में चीना की स्मृति आ गई उसे लगा शायद पन्द्रह वर्ष पहले चीना ही द्वार पर आकर खड़ी है। वह कह रही है, आंटी कुछ काम मिलेगा? तब सरला की बेटी ने कहा था– इतनी सी लड़की क्या काम करेगी? वही बात पुनः अर्पिता ने दोहराई। इतनी सी लड़की क्या काम करना जानती होगी? सुनकर मीना ने कहा– हाँ, दीदी मैं काम करना जानती हूँ। देखो, उसने बुहारी उठाकर झाडू लगाई और पोंछा लगाकर काम करना प्रारम्भ कर दिया। तब अर्पिता ने पूछा– अच्छा बता तेरे माता–पिता कौन हैं और कहाँ रहते हैं? उनका क्या नाम है, सुनकर मीना ने कहा– मेरे माता–पिता तो स्वर्ग में रहने लगे। माँ का नाम था– चीना और पिता का नाम था प्यारेलाल। दोनों ही परमात्मा को प्यारे हो गए। मैं रेल्वे ब्रिज के किनारे बनी झुग्गी में सोती हूँ और आपके जैसी माँ काम करने के बदले में रोटी दे देती है। जिसे खाकर सो जाती हूँ और रही कपड़े की बात तो किसी कूड़े घर में कपड़े मिलते हैं, उन्हें पानी से धोकर पहन लेती हूँ।

अर्पिता ने बीच में टोकते हुए कहा– यदि बीमारी होती है तो दवा कहाँ से आती है? तब मीना की आँखों से आँसू आ गये और उसने कहाँ दवा होती

तो मेरी माँ की मौत क्यों होती? बीमार अवस्था में दवा और खाना नहीं मिलने से तो मेरी माँ का मरण हो गया है।

घटना सुनकर सरला और अर्पिता का शरीर काँप गया। संसार की क्या स्थिति है? क्या यही जिन्दगी का नाम है?

कर्मोदय से जीव का होता क्या परिणाम?
कर्म योग से जीव यह पावे कई इक नाम।।

जिस प्रकार चीना की जिन्दगी देखते ही देखते बनी वह बालिका से किशोरी, किशोरी से युवती, युवती से माँ बनकर उसकी जिन्दगी उजड़ गई और अन्त में काल के ग्रास में समा गई। उसी राह पर अब मीना निकल पड़ी। शायद यही हाल मीना का भी होगा। यह सोचकर अर्पिता का हृदय द्रवित हो गया और उसने यह संकल्प किया कि अब किसी चीना, मीना की जिन्दगी इस प्रकार उजड़ने नहीं दूँगी और उसने एक नारी जागृति अभियान चलाया और जगह–जगह हो रही शराबखोरी पर रोक लगाया जाए। यह आंदोलन चलाया एवं नारी शिक्षा तथा आवश्यक सुविधाएँ पाकर प्रत्येक इंसान को जीवन जीने का अधिकार प्राप्त हो। इस प्रकार जिन्दगी के जीवन मूल्यों का अवलोकन किया।

***

जहाँ में कई रहे प्राणी जो कर्मों के सताए हैं।
उदय से कर्म के अपने जो भव–भव दुःख पाए हैं।।
पाप का बंध वे करते धर्म से हीन जो होते।
'विशद' शाता वो पाते हैं जो सम्यक् ज्ञान पाए हैं।।

26. स्वार्थपरता

राजस्थान प्रान्तातंर्गत श्यामपुर में ही राजाराम नाम का एक फेरीवाला व्यापारी निवास करता था। जो प्रतिदिन गाँव-गाँव जाकर व्यापार करता था। उससे उसकी आजीविका चलती थी। घर में माता-पिता का साया छोटी अवस्था में उठ जाने से कभी सुख-शांति का मुख देखने को नहीं मिला। युवा अवस्था होते ही पड़ौस के गाँव में छोटेलाल की पुत्री सोहनी से शादी हो गई। गृह खर्च की पूर्ति हेतु दिनभर मेहनत करता, फिर भी कहीं ढंग से घर के खर्चे की पूर्ति नहीं हो पाती। राजाराम के दो पुत्र, एक पुत्री अपनी माँ के साथ रहते। अभावग्रस्त जीवन में रहते किन्तु अपने पूर्वकृत कर्म के फल में कभी हतोत्साहित नहीं होते।

एक दिन राजाराम व्यापार के उद्देश्य से बाहर गया था। उस गाँव में आये हुये संत रविदास ने पन्द्रह दिन का जाप्यानुष्ठान कराया। सभी गाँववासियों को अनुष्ठान में बैठाया। राजाराम को भी अनुष्ठान में बैठने को कहा किन्तु राजाराम ने अनुष्ठान में बैठने से असहमति जताई। तब संत ने समझाया- देखो, राजाराम संसार में हरेक इंसान अपने कर्म का खाता है, कोई किसी का नहीं है और जो तू कह रहा है कि मैं घर नहीं जाऊँगा तो मेरा परिवार भूखों मर जाएगा यह तेरी भूल है उनका भाग्य उनके साथ है। तू तो निमित्त मात्र है। राजाराम ने अनुष्ठान में बैठने की स्वीकृति दे दी। मजबूर होकर राजाराम को पन्द्रह दिन तक अनुष्ठान में रुकना पड़ा। संत रविदास ने पन्द्रह दिन गृह का त्याग करा दिया।

यहाँ राजाराम के घर न पहुँचने पर परिवार चिंतित होने लगा। तभी किसी के द्वारा यह कहा गया कि जंगल में शेर रहता है। कल शेर ने एक

व्यक्ति का शिकार किया था हो ना हो राजाराम का ही शिकार किया हो। परिवार में रूदन मच गया। गाँववासी एकत्र होने लगे। गृह की दयनीय दशा को जानकर कुछ लोगों को रहम आया और सहयोग होने लगा। कोई अनाज देता तो कोई घी, तेल, कोई वस्त्र देता तो कोई बर्तन, देखते ही देखते राजाराम का घर मालामाल हो गया। पत्नी और बच्चों ने जो चीजें कभी नहीं देखी थी वह आज घर में भरी नजर आने लगीं अब तो क्या दोनों समय पूड़ी, पराठों से सुबह होती है, खीर, मलीदा से शाम ।

पन्द्रह दिन अनुष्ठान पूर्ण होते ही राजाराम संत के पास जाकर रोने लगा। गुरुदेव मेरा पूरा परिवार भूख से पीड़ित होकर मर गया होगा। अब मेरे लिए अनुमति प्रदान करें। मैं कम से कम उनकी अन्तिम क्रिया तो कर सकूँ, अब जा रहा हूँ घर की ओर चल देता है। घर पहुँचते-पहुँचते अंधेरा चढ़ गया। परिवार के लोग दरवाजा बन्द करके घर में ही ब्यालू के इंतजार में थे। पत्नी अग्नि जलाकर कुछ भोजन बनाने में मस्त थी। राजाराम ने द्वार की कुण्डी बजाई। बच्चे कुछ सहमे, कोई द्वार की कुण्डी बजा रहा है। अरे ! भूत आया, बच्चे माँ के पास पहुँचकर माँ की गोद में छुप गये। माँ द्वार पर भूत आया है, तभी राजाराम ने आवाज लगाई- बेटा फाटक खोल। पत्नी व बेटे तो राजाराम को मरा हुआ मान बैठे थे, सभी डर गये कि राजाराम भूत बनकर घर आया है। अनेक बार आवाज देने पर भी दरवाजा नहीं खोला। तब राजाराम दीवार कूदकर छप्पर के ऊपर चढ़कर अपने गृह-प्रांगण में जा कूदा। यह दृश्य देख पत्नी और बच्चों की आँख मिच गई और चीखे भूत आया, भूत आया, मारो... मारो... और जलते हुए चूल्हे से जलती लकड़ी लेकर मारना प्रारम्भ कर दिया, बहुत कोशिश करने पर भी पारिवारिक जन

चीखते ही गये। तब राजाराम अपने प्राण बचाकर भागा और पुनः संत रविदास के पास पहुँचा। गुरुदेव मेरी तो जान ही निकल गई। पत्नी व बच्चों ने मुझे भूत समझकर अग्नि से जलती हुई लकड़ियों से मार पीटकर यह हालत कर दी। तब संत ने कहा कि देख ली न, अपने संसार की दशा, यह संसार कितना स्वार्थी है? जिन्दा को भी मरा हुआ मानकर हालत खराब कर दी। अरे भाई! विचार करो कदाचित् मरने के बाद भी जाते तो भी सोचना चाहिए था कि आखिर है तो अपना ही गृह अतिथि किन्तु इंसान स्वार्थ चलते तक ही अपना मानता है।

इंसान न तन का सगा है और न ही चेतन का, तन से सहित आने वाले राजाराम की पत्नी और बेटे ने यह दशा बना दी तथा चेतन से सेठ भोलाराम को उसके ही पुत्र ने 25 हजार रु. देकर श्मशान घाट में गड़वा दिया। ये है संसार की विचित्र दशा, जब अपना खून ही अपना नहीं होता तब किसे हम अपना कहे।

कहीं पर तन से बैठे हैं, कहीं मन घूमता भाई।
कोई सुनाता है भावों से, कोई तो झूमता भाई।।
नहीं इंसान की महिमा, समझ में आ रही बंधु।
चले शिव मार्ग पर जो भी, चरण पग चूमता भाई।।

❊❊❊

27. अहंकार की खाई

सेठ प्रकाशचन्द एक सभ्य और धर्मनिष्ठ व्यक्ति गाँव में निवास करते हुए हमेशा एक ही भावना भाते कि मेरा बेटा पढ़–लिखकर अच्छा ऑफिसर बने अपनी दुकानदारी एवं खेती से जो कुछ भी कमाते उसका अधिकांश हिस्सा बेटे प्रियेश की पढ़ाई में खर्च करते। बेटे को जयपुर अच्छे कॉलेज में भर्ती करके हॉस्टल में रखते और सभी प्रकार की सुख–सुविधाओं से पूर्ण प्रियेश हमेशा प्रथम श्रेणी से पास होकर आगे पढ़ रहा था। माँ–बाप का लाड़ला इकलौता प्रियेश की योग्यता को सुनकर माता–पिता फूले नहीं समाते। आने–जाने वाले रिश्तेदारों के बीच में एक ही बात आती, हमारा प्रियेश कॉलेज में प्रथम श्रेणी में पास होकर एम.एस.सी. कर रहा है।

कोई सुनकर खुश हो लेते हैं तो कोई चिढ़कर रह जाते प्रियेश एम.एस.सी. करने के बाद कॉलेज में प्रोफेसर की सर्विस करने लगता है।

वहीं शहर के करीब 150 कि.मी. दूर कस्बे में रहने वाले दिनेश कुमार अपनी अध्यापक की सर्विस करते हुए प्रिया को हाई स्कूल की शिक्षा गाँव में, एम.कॉम. पढ़ने हेतु जयपुर हॉस्टल में भर्ती कराते हैं। अध्ययन और लगन का फल जिले के सभी कॉलेजों में प्रथम स्थान पाने वाली प्रिया का नाम अखबारों में छा गया। सुन्दर चेहरा गठीला गौर वर्ण का चित्र अखबार की शोभा बढ़ा रहा था। प्रियेश ने फोटो देखकर प्रिया से मिलने की इच्छा की और प्रिया को धन्यवाद देने हॉस्टल चल दिए।

प्रिया को देखकर प्रियेश प्रिया के ही होकर रह गये। प्रिया ने भी पी.जी. कॉलेज में प्रोफेसर की सर्विस कर ली। मिलने का सिलसिला शादी में परिणत हो गया।

दिनेश को इस बात की जानकारी होते ही रिश्ता करने की इच्छा हुई और बेटी के विवाह का प्रियेश के पिता प्रकाश के समक्ष प्रस्ताव रखा। भला इस प्रकार की जोड़ी मिल रही हो तो कौन मना करेगा और एक बार में ही बात तय हो गई। अतिशीघ्र गाँव के रीति–रिवाज के अनुसार शादी धूमधाम से सम्पन्न हुई प्रियेश के मन की मुराद पूर्ण हो गई, किन्तु प्रिया का अहं आसमान चढ़कर बोल रहा था। बात–बात में प्रिया स्वयं को श्रेष्ठ साबित करने की कोशिश करती। प्रियेश अनेकों बार इन बातों को नजरन्दाज कर जाता किन्तु कभी मित्रों के बीच नीचा देखने की स्थिति आने पर जवाब देना ही पड़ता आखिर दोनों के बीच दरार पढ़ने लगी और एक वर्ष भी पूरा नहीं हो पाया कि तलाक की नौबत आ गई।

प्रिया ने सरकारी रूम इलार्ट कराकर उसमें निवास बना लिया। दोनों अपनी ही कषायों में घुट रहे थे। चाहते हुए भी एक–दूसरे के नहीं हो पाते थे।

अदालत में केश चल पड़ा प्रियेश पेशी दर पेशी बढ़ाता जाता किन्तु कोई बात बनने को नहीं आ रही थी। प्रिया के पिता, दिनेश की उम्र इकसठ वर्ष की हो चली थी। सर्विस से रिटायरमेंट हो गया। कुछ दिनों के बाद अचानक बीमारी से परेशान हो गये। अनेक दवाइयाँ, अनेक डॉक्टर सब कुछ करने पर भी ठीक नहीं हो पा रहे थे।

एक बार रात्रि में नींद नहीं आ रही थी तो एक बजे उठकर बैठ गये। मन में आया, जीवन का भरोसा नहीं। एक बार बेटी के पास जाकर देखें उसका जीवन किस प्रकार खुशियों से भरा व्यतीत हो रहा है ? कई दिनों से पत्र और फोन भी नहीं आया था। सोचते–सोचते नींद आ गई। सुबह होते ही फोन लगाया। बेटी सर्विस से रिटायरमेन्ट ले लिया। स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता है। पता नहीं कब जीवन का अन्त हो जाए, मैं सोच रहा था। एक बार

अपनी बेटी को अपनी इन आँखों से अच्छी तरह से देख लूँ किन्तु तुम्हारा कोई पत्र भी नहीं आया, कई दिनों से फोन नहीं आया, आकर एक बार मिलना चाहता हूँ। जवाब में प्रिया ने कहा– पापाजी नई–नई सर्विस है, अभी कुछ दिन पहले शिमला घूमकर आयी हूँ, छुट्टियाँ पूरी हो गई है'', अभी छुट्टी नहीं मिल पा रही है, किन्तु छुट्टी मिलते ही अवश्य आपसे मिलने आऊँगी।

पिता तो पिता है, पिता का मन नहीं माना और एक सप्ताह बाद पुनः फोन लगाकर जयपुर आने का प्रोग्राम तय कर बोल दिया– बेटी मैं पन्द्रह तारीख को जयपुर आ रहा हूँ। अपनी इन आँखों से प्यारी बेटी प्रिया की हरी–भरी जिन्दगी को एक बार देख लूँगा तो साता के साथ मर तो सकूँगा। सुनकर प्रिया के होश उड़ गये, पैरों के नीचे से जमीन खिसकने लगी, कुछ भी उत्तर न दे सकी, मूक होकर सुनती रही, मन में एक ही प्रश्न घूम रहा था। आखिर पापा का स्वास्थ्य ठीक नहीं है, वह मेरी जिन्दगी को देखने आ रहे हैं। कदाचित् यहाँ की स्थिति देखकर.... सोचते ही आँखों में आँसुओं की बूँद टपक गई। प्रिया के मन में आया, क्यों न प्रियेश से निवेदन करलें पापा के आने पर कुछ दिन के लिए साथ रह लें। जिससे पापा को यहाँ की स्थिति मालूम न हो सके और देखते ही फोन उठाकर प्रियेश का नम्बर डायल करते हुए हैलो.... प्रियेश जी पन्द्रह तारीख को पापाजी आ रहे हैं, उनका स्वास्थ्य भी ठीक नहीं, उन्होंने हम दोनों को साथ रहते हुए देखने की भावना प्रकट की है.. मैं चाहती हूँ, उनके यहाँ आकर रहने तक हम दोनों साथ रह लें किन्तु पापा का स्वास्थ्य ठीक नहीं है। अतः आपको वचन देना होगा कि हम दोनों के फासले का उन्हें अहसास नहीं होना चाहिए। भला ही नाटक सही, दोनों एक–दूसरे के साथ पहले की भाँति रहे। पापा के सामने पहले रहते थे उसी तरह रहें... प्रियेश– किन्तु हम दोनों साथ रहते कहाँ हैं ? प्रिया– यही

तो मैं कह रही हूँ। प्रियेश ने मजाक करते हुए कहा– किन्तु नाटक करना तो मुझे आता नहीं है।

प्रिया.... हैलो प्रियेश, आप मजाक कर रहे हो। कृपया मेरी मजबूरी और पापा का स्वास्थ्य को समझने की कोशिश कीजिए... प्लीज...

प्रियेश– अच्छा ठीक है, जहाँ तक पापा की बात है तो मेरे लिए स्वीकार है।

प्रिया– थैन्क्यू, मैं आपसे यही उम्मीद रखती थी और चौदह तारीख को ही प्रिया कुछ आवश्यक सामान लेकर प्रियेश के यहाँ पर पहुँच गई तथा पन्द्रह तारीख को स्टेशन पापाजी को लेने के लिए दोनों साथ गये। पापा को देखते ही खुश होकर दोनों प्रणाम करते हैं, पिताजी ने आशीर्वाद दिया– खुश रहो बेटे ! प्रसन्नतापूर्वक पापा बेटी के गृह पहुँच कर विश्राम करते हैं। सुबह नित्य क्रिया से निवृत्त होकर बेटी प्रिया ! अभी मंदिर चलेंगे, इसके बाद भोजन करेंगे। सुनकर प्रिया घबराई, क्योंकि उसे तो मंदिर का पता भी नहीं था। शहर में कहीं मंदिर है भी या नहीं, पड़ौसियों से जानकारी करने पर पता चला कि आजाद चौक के पास श्री पार्श्वनाथजी का मंदिर है, वहाँ सभी श्रद्धालु दर्शन करने नित्य जाया करते हैं। प्रिया एवं प्रियेश पहली बार पापा के साथ दर्शन करने गये। मंदिर में जाकर एवं लोगों को देखकर उनके मन में अपूर्व शांति प्राप्त हुई। प्रियेश एवं प्रिया पिताजी के साथ प्रतिदिन मंदिर जाने लगे और आकर एक साथ बैठकर भोजन करते पश्चात् दोनों कॉलेज ड्यूटी पर चले जाते।

एक सप्ताह बाद पिताजी को स्टेशन तक दोनों गाड़ी से छोड़ने जाते हैं। पिताजी को गाड़ी पर बैठाकर झुककर प्रणाम करते हैं तो पिताजी ने आशीर्वाद देते हुए कहा– तुम दोनों की जोड़ी हमेशा–हमेशा के लिए सलामत बनी रहे। पिताजी का आशीर्वाद सुनते ही दोनों के शरीर में रोमांच हो आया

लौटकर वापिस घर आ जाते हैं। प्रिया ने अपना सारा सामान एकत्रित किया और अपने रूम की ओर जाने के लिए बाहर निकल पड़ी। साथ ही प्रियेश भी द्वार पर आया। प्रिया ने धन्यवाद देते हुए कहा– प्रियेश आपने मेरा साथ दिया, मैं आपकी आभारी हूँ और आगे बढ़ती है। प्रियेश एकटक देखे जा रहा था। प्रिया भी बार–बार मुड़कर प्रियेश को देख रही थी। पता नहीं क्यों दोनों के बीच अदृश्य दीवार खड़ी थी। प्रिया आगे नहीं बढ़ पा रही थी। आखिर आगे जाकर रुक गई। उसकी आँखों के सामने अंधेरा सा छाने लगा। उसे लगा मैं कोई अपराध कर रही हूँ, कृतघ्न हो रही हूँ, स्टयरिंग पर सिर रखकर रुक जाती है। गाड़ी रुकी देख प्रियेश चलकर गाड़ी के पास जाकर आवाज देकर पूछता है प्रिया क्या हुआ ?

प्रिया की आँखों से निरन्तर आँसुओं की झड़ी लग रही थी। गाड़ी का गेट खोलकर प्रियेश के सीने से लग जाती है। प्रियेश मुझे क्षमा कर दीजिए। क्या हम पापा की खुशी के लिए नाटक रूप में एक साथ रह सकते हैं तो अपनी खुशी के लिए हमेशा एक साथ नहीं रह सकते हैं।

सुनकर प्रियेश की आँखों से भी आँसू छलक आए और दोनों वापस आकर एक साथ रहने लगे।

अहंकार करके आखिर आप क्या पाएँगे।
कटुता की खाई और अधिक बढ़ाते जाएँगे।।
अपने मान का मर्दन करके तो देखो विशद।
दो दिल भी एक जान होते नजर आएँगे।।

पता नहीं यह जिनेन्द्र प्रभु के दर्शन का फल है या पिता के आशीर्वाद का फल था कि दो टूटे दिलों को एक करके उजड़ी जिन्दगी को हरा–भरा बना दिया।

***

28. करनी का फल

इस जन्म में न सही परभव में मिलता है।
अपनी-अपनी करनी का फल सबको मिलता है।।

मानपुरा निवासी सेठ नेमीचंद धन कमाने में नंबर वन और धर्म-कर्म में शून्य थे। जब उनका मरण हुआ तो मानपुरा के सेठ निर्मलचंद के गृह में पुत्र हुए। सेठ निर्मलचंद धन-धान्य से फलीभूत थे। पुत्र जन्म की विभिन्न प्रकार से खुशियाँ मनाई गईं। इकलौते पुत्र का पालन बड़े लाड़-प्यार में हुआ था। सेठ का दुर्भाग्य आया कि पुत्र देखने में सुन्दर हृष्ट-पुष्ट था किन्तु बुद्धि से कमजोर था। धीरे-धीरे समय अपनी गति से गुजरता गया। सेठ पुत्र जवाहरलाल बीस वर्ष की उम्र को पार कर रहा था। तब उसका विवाह बहादुरपुर निवासी भूरेलाल की बेटी से सम्पन्न हो गया। शादी के बाद कुछ दिनों तक तो सब ठीक रहा किन्तु कुछ दिनों बाद सेठ भूरेलाल की बेटी जूली जब उदास रहने लगी तब उसकी माँ ने एक बार अपने कुँवर साहब को घर आने का आमंत्रण भेजा किन्तु कुँवर साहब नहीं आये। हमेशा लाडी को लेने सेठ निर्मलचंद ही जाते थे किन्तु माँ ने तो मानो सौगन्ध ही ले ली कि अब तो हम कुँवरजी के आने पर ही बेटी को भेजेंगे। लगभग दो वर्ष व्यतीत हो गये। जूली के पीहर और ससुराल दोनों जगह चर्चा होने लगी। जूली अपने ससुराल नहीं जाती क्या बात है ? कहीं कोई बात बन बिगड़ गई होगी। वहाँ ससुराल में भी लोग चर्चा करते, सेठ निर्मल की बहू दो वर्ष से पीहर में रह रही है। कुछ गड़बड़ समझ में आता है। तब सेठ पुत्र जवाहरलाल की माँ ने बेटे को समझाते हुए कहा-बेटा गाँव में लोग चर्चा करते हैं कि सेठ कि बहू दो वर्ष से नहीं आई, पता नहीं क्या गड़बड़ हो गया है ? चाहे कुछ भी हो बेटा तू

जा और बहू को लेकर आ जाना। तब जवाहर ने कहा- मैं कुछ जानता नहीं, किससे क्या बोलना? वहाँ पर जाकर क्या करना होता ? माँ ने पुनः समझाया- कोई बात नहीं वहाँ जाकर कोई कुछ पूछे तो-हाँ, ना में उत्तर देते जाना और ध्यान रखना चाहे जहाँ जमीन में नहीं बैठ जाना। उच्च स्थान पर बैठना तथा किसी से भी बात करना तो मीठी आवाज में बोलना, जैसे कोयल बोलती है और कहीं कोई विशेष चीज दिखे तो उसके बारे में पूछ लेना। बस और करना भी क्या है ? माँ के समझाने पर जवाहरलाल अपनी ससुराल पत्नी को लेने चल दिया। वहाँ पहुँचते ही सेठ भूरालाल ने अपने कुँवरजी को आते देखा तो बहुत खुश हुआ और पूछा- अरे कुँवरजी आ गये, जवाहरलाल ने कहा- हाँ। सेठ भूरामल- घर में तो सब ठीक है-ना, तो क्या पिताजी का स्वास्थ्य ठीक नहीं है ?-हाँ, क्या दवाई वगैरह नहीं कराई-ना, तो क्या पैसे-वगैरह नहीं थे ? हाँ, उनके बचने की उम्मीद है-ना, जूली को लेने आये हो- हाँ। सेठ ने सोचा शायद कुँवरजी संकोच करते हैं। अतः एक बच्चे के साथ घर में अन्दर भेज दिया। घर परिवारजन को ज्ञात होते ही सभी लोग एकत्रित हो गये। कमरे में जाकर देखा तो कुँवरजी कहीं नजर नहीं आये। तब एक बालक ने कहा- अरे, वो बैठे अलमारी पर क्योंकि माँ ने कहा था उच्च आसन पर बैठना तो वहाँ उच्च स्थान पर जा बैठे। तब जूली की दादी ने कहा- अरे कुँवरजी यहाँ आकर बैठे कुछ घर के हाल-चाल बताए। घर में माँ-पिता कैसे हैं ? जवाहरलाल अलमारी से उतरकर सोफा पर आ बैठे। अन्य लोगों ने अन्य बातें की। तब जवाहर बोलने लगे- कुहु... कुहु... कुहु... (क्योंकि माँ ने कहा था, मीठी आवाज में बोलना जैसे कोयल बोलती है) इतने में भोजन तैयार होते ही सभी ने साथ बैठकर भोजन किया और यत्र-तत्र बातें करते हुए सो गये।

प्रातः सभी उठकर यथायोग्य नित्य क्रिया से निवृत्त होकर, नहा-धोकर नाश्ता करते हैं। पश्चात् सेठ भूरालाल तथा उसका पुत्र एवं कुँवरजी सभी घूमने के लिए निकले। रास्ते में बहती हुई नदी देखी तो जवाहरलाल ने पूछा- यह क्या है ? सेठ भूरामल- यह नदी है। जवाहरलाल- इसे किसने खुदवाया होगा ? सेठ भूरामल- यह कोई खुदवाता नहीं, यह प्राकृतिक है। जवाहरलाल- यह तो बहुत लम्बी दिख रही है। सेठ- हाँ, नदी तो बहुत दूर तक बहती है। जवाहरलाल- इसमें पानी कहाँ से बरसता है ? सेठ- पानी बरसता नहीं झरनों से आता है। जवाहरलाल- जब यह नदी खुदाई होगी तो इसकी मिट्टी कहाँ डाली होगी। सेठ भूरामल- हम बताएँ। जवाहर- हाँ बताईये। सेठ भूरामल- इस नदी की मिट्टी आधी तो ली थी मैंने, जो मेरे बेटी हुई और तुम्हारे जैसे बुद्धू को देनी पड़ी और आधी ली आपके बाप ने जो तुम्हारे जैसा मूर्ख बेटा उनके घर जन्मा। सुनकर जवाहर बहुत जोर से हँसने लगा।

अज्ञानी अज्ञान का काम करते हैं,
औरों की जिन्दगी तमाम करते हैं।
हँसते हैं स्वयं के उपहास पर,
स्व-पर का जीना हराम करते हैं।।

***

29. रिश्वत का फल

बिहार प्रांत के मोहनगढ़ का क्षत्रिय पुत्र रामपाल सिंह जब पुलिस इंस्पेक्टर बनकर घर आया तो सम्पूर्ण गृह नगर प्रसन्नता से फूला नहीं समाया। लोगों ने अपने नगर में शांति की कामना की तथा अपने नगर के सपूत से देश और समाज में शांति की भावना भाई।

कुछ समय बाद रामपाल की शादी देवगढ़ निवासी विनयपाल की पुत्री राशि से सम्पन्न हुई। दोनों अपने जीवन की घड़ियों को आनन्दपूर्वक जी रहे थे। रामपाल ड्यूटी से आते ही अपनी पत्नी राशि के साथ समय बिताता था। रामपाल का पुत्र हुआ जिसका नाम रखा दिनेश।

दिनेश देखते ही देखते बढ़ने लगा और पाँच वर्ष का होकर सागर पब्लिक स्कूल में पढ़ने लगा। रामपाल का जीवन स्वर्ग की तरह व्यतीत हो रहा था। कहावत है-**''कभी-कभी रक्षक भक्षक बन जाते हैं''**। पुलिस इंस्पेक्टर रामपाल सिंह शहर का इंस्पेक्शन (निगरानी, गस्त) के लिए जा रहा था कि एक बच्चा ट्रक के नीचे आ गया। यह दृश्य देखकर इंस्पेक्टर रामपाल सिंह ने गाड़ी बढ़ाकर ट्रक का पीछा किया और ट्रक के आगे निकालकर, ट्रक के आगे गाड़ी खड़ी कर दी। ड्राईवर को मजबूर होकर ट्रक रोकना पड़ा। उसने सोचा अब तो गड़बड़ हो गया, करें तो क्या करें ? तुरन्त ही जेब से एक हजार का नोट निकाल कर इंस्पेक्टर के हाथ में थमा दिया। इंस्पेक्टर रामपाल गाड़ी बढ़ाकर घर पहुँचा। पत्नी को एक हजार रु. दिये तो पत्नी खुश हुई तभी पत्नी राशि ने रामपाल से कहा- एजी, जरा देखो तो अपना दिनेश रोज चार बजे आ जाता था किन्तु आज अभी तक स्कूल से नहीं आया, लगभग पाँच बजने को हैं, पता नहीं क्या बात हो गई ?

रामपाल ने तुरन्त गाड़ी उठाई और घटनास्थल की ओर चल पड़ा। वहाँ चारों ओर भीड़ लगी थी। भीड़ को चीरते हुए आगे जाकर देखा तो रामपाल चीखा सामने दिनेश का क्षत-विक्षत मृत शरीर पड़ा हुआ है। उसी के ऊपर सिर पटकने लगा, लोगों ने रामपाल को उठाकर एवं मृत दिनेश को उसके घर भेजा।

राशि को देखकर रामपाल ने रोते हुए कहा। राशि मेरे लिए अपने पाप कर्म का फल मिल गया। दिनेश को ट्रक के नीचे कुचलने पर ड्राईवर को एक हजार रु. के बदले में छोड़ दिया।

रामपाल ने एक हजार रु. का नोट लेकर टुकड़े-टुकड़े कर दिये और संकल्प लिया आज के बाद कभी रिश्वत नहीं लूँगा। संसार की दशा क्या है ?

कभी एक हजार लेकर वही कितना खुश था, कभी उस एक हजार को टुकड़े-टुकड़े करके खुश हो रहा है। यह स्वार्थ की महिमा है। कहा भी है-

स्वार्थ भरी दुनिया में, कोई न ठिकाना है।
दर्द के मरुस्थल में, अस्कों से नहाना है।।
मोह की है माया विशद, और कुछ नहीं जग में।
जिन्दगी की महफिल में, आना और जाना है।।

नहीं मिला कोई त्राता दुनियां में इनके समान मुझे।
इसलिए तो पतवार छोड़ दी है भक्ति के सहारे इनकी।।

जोड़कर रखते दौलत आज तेरी यही जुर्रत है।
काल आते ही चला जायेगा छोड़कर दौलत सारी।।

करूँ मैं दुश्मनी किससे, कोई दुश्मन नहीं मेरा।
हमेशा के लिए डाला मुहब्बत ने हृदय पर घेरा।।

30. बड़े मियाँ सुभानअल्ला

भारत देश राजस्थान प्रान्तार्गत चन्द्रनगर में दो मित्र श्यामलाल और प्यारेलाल निवास करते थे। दोनों अत्यन्त घनिष्ठ मित्र थे, अपने गृहकार्य में दक्ष होने के साथ दोनों अपनी धाक जमाने के लिए खुरापात बुद्धि के द्वारा लोगों को हमेशा परेशान करते थे। धर्म-कर्म को छोड़कर **'खाओ-पीओ मौज उड़ाओ'** की भाषा बोलते थे। समय व्यतीत होते श्यामलाल का स्वर्गवास हो गया। जिसने उसी नगर में हरप्रसाद पटेल के गृह में जन्म लिया। घर में अनेक प्रकार से खुशियाँ मनाई गई। कुछ काल पश्चात् प्यारेलाल का भी मरण हुआ और वह भी हरप्रसाद के गृह छोटे पुत्र के रूप में जन्मा। कुछ वर्ष व्यतीत हुए कि हरप्रसाद का बीमारी के कारण मरण हो गया। दोनों भाई किसी प्रकार से अपनी आजीविका चलाते हुए जीवन व्यतीत करने लगे।

एक दिन पड़ौसी व्यक्ति ने उसके खेत पर दावा कर दिया। बेचारे हरप्रसाद के पुत्र बड़े परेशान होने लगे। केश की समस्या और परिवार की समस्या से जूझ रहे बड़े भाई की ससुराल से सूचना आई कि उसके छोटे साले का स्वर्गवास हो गया। उसी दिन खेती की पेशी थी, उसी दिन ससुराल जाना था। बड़ा परेशान था, क्या करे, यदि ससुराल नहीं जाते तो बुरा मानेंगे और यदि पेशी पर न जायें तो केश हारने पर खाने के लाचार हो जाएंगे इसलिए ससुराल छोटे भाई से जाने को कहा। छोटे भाई ने मना करते हुए कहा- मैं कुछ जानता नहीं, वहाँ पर क्या कहूँगा ? तब भाई ने समझाते हुए कहा- कोई बात नहीं, वहाँ पर जाना यदि सासू माँ रोने लगे तो समझा देना कि **''जो होना था सो हो गया, अब रोने से क्या लाभ,**

मन को शांत करें और जो है उसी में ध्यान देवें।'' छोटा भाई मजबूर होकर घर से पैदल चलता है, रास्ते में भाई के द्वारा बताई गई बात स्मरण करता जा रहा था। एक स्थान पर शीतल जल भरा देख भोजन करने को बैठ गया। भोजन करते ही भाई के द्वारा दिया गया निर्देश भूल गया, वह बड़ा परेशान हुआ, अब क्या करें, वहाँ पर जाकर क्या कहेंगे ? यदि घर वापिस जाते तो परेशानी, भाई डाटेगा और यदि वहाँ पर जाते तो क्या कहेंगे। इसी उधेड़बुन में आगे बढ़ता जा रहा था कि एक गाँव में किसी किसान का बैल मर जाने से वह रो रहा था। लोग बैठकर उसे समझा रहे थे, तब नगर के प्रधानजी वहाँ से निकले। उन्होंने वजनदारीपूर्वक किसान से कहा–**''अरे पागल ! बन रहा है, मर गया तो मर जाने दे, चमर औलाद है, थोड़ा मेहनत करना, फिर हो जाएगा।''** उसी समय छोटा भाई वहाँ से निकला। उसने सुना कि मर जाने पर ऐसा बोला जाता है तो उसने याद कर लिया और जैसे ही भाई की ससुराल पहुँचा। सासुजी को रोते देखा तो बोला–**''अरे ! मर गया मर जाने दे वह तो चमर औलाद है, थोड़ा मेहनत करना फिर हो जाएगा।''** लोगों ने सुना तो डाँट–पीटकर भगा दिया। बेचारा भूखा–प्यासा रात में पेड़ के नीचे पड़ा रहा। सुबह होते ही अपने घर वापिस आया। घर में रोते–रोते कहा– हमको वहाँ भेजा था न तो खाने को दिया और न रात में रुकने दिया। उल्टा मार–पीटकर घर से निकाल दिया। बड़े भाई ने सुना तो अत्यन्त क्रोधित हुआ और चल दिया ससुराल वालों को समझाने के लिए, कुछ दूरी पर चलते ही गुस्सा शांत हुआ। रास्ते की नदी में स्नान किया, भोजन करने के बाद चलकर ससुराल पहुँचते ही सासुजी के पास आने पर आकर रोते हुए अपने छोटे बेटे के मरण की बात कही, साथ ही कहा कि देखो तो

कंवरजी हमारा तो छोटा बेटा मर गया है और आपके भाई आए थे तो वह बोल रहे थे कि ''मर गया मर जाने दे, वह तो चमर औलाद है, थोड़ा मेहनत करना फिर हो जाएगा।'' उन्होंने इतना भी नहीं सोचा कि हम पर तो दुःख पड़ा है कम से कम ऐसा तो नहीं कहना चाहिए था। तब कंवरजी भावुक होकर बोलते हैं–अरे ! माँ जी हमको तो पता नहीं था कि भाई ने ऐसा बोल दिया है, जो कुछ होना था, सो हो गया, अभी आपका छोटा बेटा मरा तो हमने छोटे भाई को भेजा था किन्तु जब आपका बड़ा बेटा मरेगा तो हम छोटे भाई को नहीं भेजेंगे, हम स्वयं ही आ जाएंगे। अब आप ही सोचिए उनकी बुद्धि को.....।

बिना सोचे बिना समझे लोग जो काम करते हैं।
स्वयं के साथ परिजन को भी वह बदनाम करते हैं।।
पिता–माता गुरुजन की करें आज्ञा का जो पालन।
खुशी आनंद में रहकर जहाँ में नाम करते हैं।।

***

31. बकरा की दाढ़ी

छत्तीसगढ़ प्रान्तांतर्गत दुर्ग जिले के ग्राम शिवनगर में घनश्याम जाट और उसकी पत्नी फूलवती परिवार में शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे थे कि घनश्याम को एक दिन अटैक आया और उसका अस्पताल में देहांत हो गया। बेचारी फूलवती अपने जीवन के दिनों को गिन–गिनकर काट रही थी। आगे–पीछे कोई सहारा नहीं, छोटा सा खेत था जिसमें जो कुछ प्राप्त हो जाता उससे जीवनयापन हो रहा था। उसके पास एक बकरी भी पली थी जिसका दूध पाकर खुश होकर रहती थी। उसका एक बकरा हुआ जो लगभग साढ़े तीन वर्ष का हो गया था। ग्राहक उसकी अच्छी कीमत देने को तैयार थे किन्तु बुढ़िया बकरे को अधिक चाहती थी इसलिए उसने अभी बकरा नहीं बेचा था। एक दिन बकरा जंगल से आकर घर में प्रवेश करने के लिए दौड़ा कि उसी समय पुलिस की जीप निकल रही थी। उससे टकराकर बकरा मर गया। बुढ़िया फूलवती बकरे को देखते ही चीख पड़ी। हाय मेरा बकरा **'किन्तु अब रोने से होय क्या जब चिड़िया चुग गई खेत'** जीप आगे बढ़ गई। बुढ़िया बकरे पर हाथ रखे घंटों रोती रही, लोगों ने सांत्वना देकर फूलवती को घर भेजा और बकरा को नगर से बाहर डलवा दिया। लगभग पाँच–छः माह व्यतीत हो गये थे। नगर में स्वामी प्रज्ञानंद का आगमन हुआ, लोगों ने उनकी धर्म कथा सुनने की भावना प्रकट की। तब स्वामी जी ने तीन दिवसीय कथावाचन का कार्यक्रम बनाया। नगर के बीच चौराहे पर पाण्डाल बनाया गया। आस–पास के नगर एवं गाँवों के लोगों को आमंत्रण दिया और कथावाचन प्रारम्भ हुआ।

प्रतिदिन स्वामीजी का कथावाचन चल रहा था। फूलवती को कथावाचन की जानकारी प्राप्त होते ही एक दिन कथा में पहुँचकर सबसे आगे स्थान पर

बैठ गई। कथावाचन स्वामी जी बड़े मनोयोग से कर रहे थे तभी अचानक वृद्धा फूलवती की आँखों में आँसुओं की धारा बहने लगी। स्वामी जी की निगाह बुढ़िया की ओर गई तो उन्होंने पूछा– अरे बुढ़िया माँ ! आपके लिए रोना आ रहा है, क्या बात है, कथा तो अच्छी लग रही है ना, स्वामी प्रज्ञानंदजी सोच रहे थे कि कथावाचन के मार्मिक प्रसंग को सुनकर बुढ़िया की आँखों में आँसू आ रहे हैं। बुढ़िया ने कहा– हाँ, स्वामीजी कथा तो अच्छी है, पुनः स्वामीजी ने कहा तो रोना क्यों आ गया। तब बुढ़िया ने कहा– स्वामीजी आज से छः महीने पहले ! स्वामी जी चौंके– छह महीने पहले, अरे ! कथा तो अभी चल रही है। छह महीने पहले क्या हो गया ? तब बुढ़िया ने कहा– हाँ, स्वामी जी छह महीने पहले, स्वामी ने कहा क्या हुआ छह महीने पहले ? तब बुढ़िया ने कहा– स्वामीजी हमारे पास एक बकरा था, बड़ा प्यारा बकरा था। छह महीने पहले स्वामी जी बकरा मर गया था, उसकी दाड़ी स्वामीजी बिल्कुल आपके जैसी थी। आपकी दाढ़ी देखकर बकरे की याद आ गई इसलिए रोना आ गया (हँसी)।

स्वामी जी ने कहा– अरे ! भोली माँ तू यहाँ बैठकर कथा सुन रही है या स्वर्ग के चक्कर लगा रही है। तब बुढ़िया ने कहा– अरे ! स्वामीजी मुझ पापिन को कहाँ स्वर्ग का रास्ता पता है, मुझ अंधी को तो घर का भी रास्ता बड़ी मुश्किल से मिलता है।

कहीं पर तन से बैठे हैं, कहीं मन घूमता भाई।
कोई सुनता है भावों से, कोई तो झूमता भाई।।
नहीं इंसान की महिमा, समझ में आ रही बंधु।
चले शिवमार्ग पर जो भी, चरण जग चूमता भाई।।

***

32. स्वारथ का संसार

हरियाणा प्रान्तान्तर्गत जिला गुड़गांव के गोविन्दगढ़ में जैन संत आदिसागरजी महाराज का आगमन हुआ। सभी नगरवासियों ने महाराज की अगवानी करके उन्हें मंदिरजी में प्रवेश कराया पश्चात् संत निवास में विराजमान हुए। कुछ दिनों के प्रवास में मुनिराज का धर्मोपदेश नित्य निरन्तर चल रहा था। एक दिन नगर की महिला महाराज के चरणों में नमस्कार करके बैठ गई और उसने अपने जीवन में आने वाली आपत्ति से छुटकारा पाने का उपाय मुनिराज से पूछा, गृह में होने वाले कलह की बात कर रही थी तभी एक दंपत्ति राजेन्द्र और राशि ने आकर महाराज के लिए नमोस्तु बोला और बैठ गये। उस महिला के गृह-कलह की कहानी सुनकर राशि को मानो विश्वास ही नहीं हुआ कि इस महिला के पति-पत्नी में इस प्रकार की स्थिति है।

दंपत्ति ने प्रसन्न होकर कहा- हमारा जीवन अच्छा है, हम दोनों ने साथ जीने और मरने की सौगंध ले रखी है। मुनिराज ने सुनकर कहा-**'स्वारथ का संसार है'** राशि से नहीं रहा गया। तब राशि ने कहा- नहीं महाराज, हम सत्य कह रहे हैं, साथ ही राजेन्द्र ने भी हाँ कहा ! तब मुनिराज ने कहा-'स्वारथ का संसार है' अब तो दंपत्ति कह उठा यदि आपको विश्वास नहीं होता तो परीक्षा करके देख लीजिए। तब मुनिराज ने कहा छह माह लगेंगे और रोज एक-दो घंटे का समय देना होगा। राजेन्द्र ने बात स्वीकार कर ली और प्रतिदिन मुनिराज के साथ प्राणायाम करने लगा। कुछ ही दिनों में प्राणायाम करने में माहिर हो गया, जो लगभग दो-तीन घंटे तक श्वांस साधने लगा, मानो उसका अंत ही हो गया हो।

एक दिन मुनिराज ने राजेन्द्र से कहा- अब आपकी परीक्षा का दिन आ गया है। राजेन्द्र ने हाँ कह दी। मुनिराज ने राजेन्द्र से कहा- कल तुम्हें प्रातः उठकर घर के चौक में एक चीख भरते हुए नीचे गिर जाना है और अपनी श्वांस को रोककर पैर फैलाकर पड़ जाना। देखना डॉक्टर आयेगा, वैद्य और तंत्र-

मंत्रादि होंगे उसी समय आपकी परीक्षा होगी। दूसरे दिन राजेन्द्र ने वैसा ही किया। प्रातः होते ही चीखकर अपने कमरे में गिर गया। पत्नी राशि ने सुना तो दौड़कर वहाँ पहुँची देखा राजेन्द्र बेहोश लेटा है, वह रोते ही आस-पास अड़ौस-पड़ौस वालों को बुलाने लगी। डॉक्टर को बुलाया किन्तु सभी ने हाथ की नाड़ी, दिल की धड़कन बंद देखकर मृत घोषित कर दिया।

नगरवासी एकत्र हो गये और श्मशान ले जाने की तैयारी होने लगी। राशि निरन्तर रोए जा रही थी। उसकी आँखों से अश्रु की धारा रुक नहीं रही थी। बाहर की तैयारी पूर्ण होते ही लोगों ने उठाया तो द्वार छोटा होने से वह बाहर नहीं निकल रहा है। हाथ-पैर अकड़ गये हैं, क्या करें ? किसी ने कहा-भाई एक हाथ एक पैर काट दें तो आसानी से मुर्दा बाहर निकल जाएगा, तभी किसी दूसरे ने कहा- अरे जीवन भर अच्छी तरह से गुजारी अंत में उसकी मिट्टी क्यों बिगाड़ रहे हो, ऐसा क्यों न करें कि किवाड़ की चौपाटी काट दे तो मुर्दा आसानी से निकल जाएगा। सभी ने अपनी-अपनी सलाह देना प्रारम्भ किया तब एक बुजुर्ग ने कहा-अपनी-अपनी चलाते हो, अरे जिसका है एक बार उससे तो पूछ लो क्या करना है ? लोगों को बात पसन्द आई और लोग राशि के पास जाकर बोले-भाई मुर्दा बाहर नहीं निकल रहा है तो कोई कहते हैं कि किवाड़ की चौपाटी काट दे तो निकल जाएगा। कोई कहते हैं कि हाथ-पैर काट दे तो निकल जाएगा। अब आप बताएँ क्या करना चाहिए? राशि सुनकर कुछ देर के लिए स्तब्ध रही, उसके बाद पुनः रोते हुए बोली हम क्या बताएँ, आप ही जानते हैं, अभी तक तो ये थे तो सब कुछ करवा लेते थे, अब चौपाटी काट देंगे तो कौन बनवाएगा, इसलिए हाथ-पैर ही काट दिए जाए तो ठीक रहेगा हे भगवान !

राजेन्द्र ने सुना तो उसे विश्वास नहीं हुआ कि राशि भी ऐसा बोल सकती है, उसने अपना प्राणायाम को समाप्त करते हुए हाथ-पैर हिलाना प्रारम्भ कर दिया और उठकर कहा-'स्वारथ का संसार है'।

स्वारथ का संसार है भाई, स्वारथ का संसार।
चारों ओर दिखाई देता, माया का बाजार।।

33. ऊँचाई का रास्ता

सेठ सोमदत्त अपने ग्राम समाई रायपुर में अपने परिवार के साथ आराम से रहते थे। वह हमेशा सभी के जीवन में खुशहाली की कामना किया करते थे। सभी को अपने कर्त्तव्य के प्रति निष्ठावान होने की शिक्षा दिया करते थे। स्वयं अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए अपना जीवन व्यतीत करते थे। ग्राम ही क्या दूर–दराज के लोग भी सेठ सोमदत्त का बहुत आदर करते थे, उनका व्यापार गाँव में तथा गाँव के बाहर भी फैला हुआ था। अनेक कर्मचारी कार्य करते थे, सभी में कर्त्तव्यपरायण की भावना कूट–कूटकर भरी थी और समर्पण भी था। एक बार एक नवयुवक सेठजी के पास नौकरी की भावना से आया तो सेठजी ने उसे मैनेजर से कहकर नौकरी पर रख लिया किन्तु नौकर कर्त्तव्यहीन और प्रमादी होने से काम ठीक से नहीं करता था। सेठजी ने अनेक बार उसे कर्त्तव्य का भान कराने का प्रयत्न किया किन्तु कुछ भी अंतर नहीं पड़ा।

एक दिन मैनेजर ने सेठ के पास आकर शिकायत की कि यह रामजीलाल न तो स्वयं सही काम करता है और जो करते हैं उन्हें भी बातों में लगाकर रोकता है और उन्हें गलत शिक्षा भी देता है। सेठजी इसके कारण अन्य कर्मचारी भी अपने काम के प्रति लापरवाह हो रहे हैं और काम भी बाधित हो रहा है। सेठजी ने रामजीलाल को बुलाकर काम की बात कही तो वह कड़क कर बोला–इंसान जितना कर सकता उतना ही तो करेगा। कोई बैल थोड़ी ही है कि रस्सी से बांधकर डंडे मार–मारकर काम कराया जाए। सेठ ने रामजीलाल को उसी दिन से नौकरी से निकाल दिया।

रामजीलाल ने अपनी गलती तो स्वीकार नहीं कि बल्कि सेठ से चिढ़कर बदला लेने की ठान ली। एक दिन सेठजी मंदिर में जाकर प्रभु के चरणों में ढोक लगा रहे थे, तभी रामजीलाल ने आकर पीछे से लाठी का वार कर दिया और भाग निकला। थोड़ी दूर ही भागा होगा कि लोगों ने उसे पकड़ लिया और सेठ के पास लाकर खड़ा कर दिया।

सेठ ने पानी लाने के लिए इशारा किया तो लोग तुरन्त ही शीतल जल लेकर आए। सेठ ने रामजीलाल की ओर इशारा करते हुए कहा, उसे पिला दीजिए। बेचारा थककर पसीना–पसीना हो रहा है। लोगों ने रामजीलाल को जल दिया तो उसकी आँखों से आँसू बह निकले। तब सेठ ने कहा– बेटा रोओ मत, जल पी लो। गलती इंसान से ही तो होती है, रामजीलाल सेठ के चरणों में गिर गया। सेठ ने रामजीलाल के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा– बेटा, जो गलती का अहसास कर लेता है, वह इंसानियत को पा लेता है और सद् इंसान बनकर ऊँचाई को प्राप्त करता है।

हीन कर्त्तव्य से इंसान भी शैतान होता है।
बैर का भाव आने से वही हैवान होता है।।
यहीं शैतान बसते है यहीं हैवान बसते हैं।
करे स्वीकार जो गलती वही इंसान होता है।।

***

34. स्वच्छंदता का परिणाम

राजस्थान प्रान्तान्तर्गत बूँदी जिले ग्राम शाहबाद में राजमल और सेठानी राजमति के पाँच पुत्र एक पुत्री थी। पुत्री पाँच भाइयों के बीच बड़े लाड़–प्यार में पली थी तथा माता–पिता की भी लाड़ली थी। इस कारण किसी भी काम करने को कोई कहता नहीं था और जिस वस्तु की इच्छा करती वह प्राप्त कर लेती थी।

लाड़–प्यार का परिणाम कि कुछ हठवादी हो गई और धीरे–धीरे बड़े होने पर स्वच्छंद भी हो गई। माता–पिता ने जब बेटी इंदु की शादी करने का विचार किया, एक दो जगह शादी की बात चलाई तो उसने वहाँ शादी करने से मना कर दिया और अपने किसी रिश्तेदार, मिलने वाले के सहयोग से स्वयं ही अपनी इच्छानुसार शादी कर ली। माता–पिता के लाख समझाने पर जब इन्दु ने कोई बात नहीं मानी तो माता–पिता उससे विपरीत हो गये और बेटी से नाता तोड़ दिया।

समय व्यतीत होता रहा। कुछ दिनों में इन्दु की स्वच्छंदता, बड़बोलापन से ससुराल पक्ष के लोग भी तंग आने लगे। बहुत समझाने पर भी किसी की बात नहीं मानी तो ससुराल पक्ष के लोगों ने भी घर से बाहर निकाल दिया। अनेक प्रकार से घर की बदनामी हुई। आये दिन का झगड़ा देखकर ससुराल वाले गाँव छोड़कर अन्य ग्राम में जाकर अपना व्यापार करने लगे। इंदु का जीवन संकट में पड़ गया। गाँव के कुछ लोगों ने इंदु के जीवन निर्वाह के लिए धर्मशाला का छोटा सा कमरा रहने को दे दिया। खाने–पीने की व्यवस्था की, कुछ दिनों तक इंदु उस व्यवस्था के अनुसार रही लेकिन अकेलापन बर्दाश्त नहीं कर सकी। तब कहीं आस–पास के नगरों में होने वाले आयोजनों

में जाकर अपना समय गुजारने लगी। उससे भी आखिर ठिकाना नहीं पड़ा। तब एक बार पुनः ससुराल वालों के गाँव जाकर जीवन निर्वाह की याचना की, परिवार वालों ने धक्के देकर बाहर निकालने का प्रयत्न किया किन्तु असफल रहे। अंत में गाँव के मकान में रहने को जगह एवं निर्वाह के लिए दो हजार रु. मासिक राशि देना घोषित की।

कुछ समय तक इस प्रकार से चलता रहा किन्तु जिसका पग बाहर घूमने में पड़ गया हो वह कैसे एक स्थान पर अकेले रह सकती है ? आखिर कुछ दिनों बाद पुनः अपने परिवार वालों के पास जाकर साथ में रहने की गुहार की किन्तु असफलता ही हाथ लगी। आस–पड़ौस के लोगों के कहने पर कहें या स्वयं की हठग्राहिता कहें कि वह पुलिस में तथा कोर्ट में जा पहुँची कि पारिवारिक जन हमें परेशान करते हैं, मारने की धमकी देते हैं, केश चलने लगा। अब स्थिति ही विचित्र हो गई। कोई विशेष योग्यता भी प्राप्त नहीं कर पाई तथा उच्च जाति, उच्च गृह में बड़ी और पली होने से कोई छोटा काम करने में भी नहीं आता।

धीरे–धीरे लोगों के बीच में उसकी स्वच्छंदता और हठगृहता के चर्चे आने से लोग अपने पास आने से इंकार करने लगे। इंदु का जीवन अब किंकर्त्तव्यविमूढ़ की तरह हो गया। कहावत सिद्ध हुई–

'धोबी का कुत्ता घर का न घाट का।'

बिना सोचे बिना समझे वसर जो काम करते हैं।
जो आए बीच में उनके उन्हें बदनाम करते हैं।।
करें कर्त्तव्य का पालन स्वयं जो स्वार्थ से हटकर।
विशद फल प्राप्त करके वह जगत् में नाम करते हैं।।

***

35. सत्–संस्कार

उत्तर प्रदेशान्तर्गत सुल्तानपुर नगर की छटा अद्‌भुत थी। नगर के चारों ओर परकोटा बना था जिससे नगर पूर्ण सुरक्षित था। बीच–बीच में पार्क और नगर के कतारबद्ध भवन ऐसे लगते थे मानो सेवा का मार्च पास हो रहा हो। वैश्य हर्षवर्धन और उसकी पत्नी मोहनी अपने रूप से सबका मन मोहित करती थी। उनका एक पुत्र रोहित पाँच–छः वर्ष का था। सभी आनन्दपूर्वक अपने परिवार में निवास कर रहे थे।

हर्षवर्धन सुबह नहा–धोकर तैयार होते ही भोजन पान करके अपनी दुकान चला जाता तथा रोहित स्कूल जाता था। मोहिनी अपने गृहकार्य में व्यस्त रहती थी। जिन्दगी के इतने दिन कब कैसे निकल गये, पता भी नहीं चला। कुछ दिनों बाद हर्षवर्धन का स्वास्थ्य बिगड़ गया। इस कारण दुकान पर जाना बंद हो गया। नौकर के भरोसे सारा काम चलने लगा। नौकर तो नौकर ही है आखिर किस प्रकार से काम करते, कोई ठिकाना नहीं रहा। व्यापार में भी कमी आई और स्वास्थ्य में भी पैसा पानी की तरह बह रहा था। कुछ समझ में नहीं आता, क्या करें।

लोग कहते हैं–'छोटा परिवार, सुखी परिवार' किन्तु सत्य यह है कि **बड़ा परिवार सुखी परिवार होता है।** यदि परिवार में तीन भाई होते तो एक के बीमार होने पर भी दो अपना व्यापार सम्हाल सकते थे। यदि एक भाई की पत्नी पीहर चली जाए तो अन्य भाइयों की पत्नियाँ गृहकार्य सम्हाल सकती हैं। भोजन आदि की व्यवस्था बना सकती हैं। एक अकेला है पत्नी चली गई तो पति भोजन के लिए मोहताज, पति का स्वास्थ्य बिगड़ गया तो परिवार में खाने के लाले पड़ने लगे। आप विचार करें कि छोटा परिवार सुखी परिवार है या बड़ा परिवार सुखी परिवार है।

धीरे–धीरे हर्षवर्धन का स्वास्थ्य ठीक होने लगा किन्तु शारीरिक कमजोरी एवं मानसिक विकल्प से हर्षवर्धन दुःखी रहने लगा। उस पर भी

मोहिनी के द्वारा आये दिन की जाने वाली फरमाईश से और खीझने लगा परिवार में पत्नी के बीच आये दिन खींचातानी चलने लगी।

एक दिन मोहिनी सुबह सात बजे तक सोकर नहीं जागी। तब हर्षवर्धन ने आवाज देकर जगाने की कोशिश की; किन्तु पहले तो जागी नहीं फिर जागी तो चिढ़कर कहने लगी। नींद खराब कर दी चैन से सोने भी नहीं देते। आखिर डांट–डपट प्रारम्भ हो गया। तब मोहिनी गुस्से में आकार बोल पड़ी, सुबह होते ही भौंकना प्रारम्भ कर दिया। कुत्ता, हर्षवर्धन भी चुप नहीं रह सका, वह भी कुतिया कहकर संबोधन करने लगा। आखिर दोनों आपस में एक–दूसरे को कुत्ता–कुतिया, कुत्ता–कुतिया कहकर लड़ने लगे, तभी बाहर खेलता हुआ रोहित आकर जोर से हंसने लगा चौंककर मोहिनी ने डांटते हुए बोला– रोहित तू क्यों हंस रहा है ? तब रोहित बोला– अहः अहः मैं पिल्ला (हंसी) प्यारे भाई ! हंसने की बात नहीं, सोचने की बात है। जब बच्चे के माता–पिता एक–दूसरे को कुत्ता–कुतिया कहेंगे तो बच्चा क्या पिल्ला से ज्यादा सोच सकते हैं ? नहीं...

आखिर हर्षवर्धन को अपनी गलती का अहसास हो गया और उस दिन से उसने अपनी पत्नी को हे देवी ! कहकर पुकारना प्रारम्भ कर दिया तथा मोहिनी ने भी पति को हे देव ! कहना प्रारम्भ कर दिया। घर का वातावरण बदला, पुनः पूर्ववत स्थिति आ गई।

एक बार किसी सज्जन ने रोहित से पूछा– तू कौन है तब रोहित ने उन महाशय से कहा– मैं देवपुत्र हूँ। यह संस्कारों की और घर के वातावरण की महिमा है।

नहीं संस्कार पाते हैं कभी बच्चे सिखाने से।
नहीं वह याद कर पाते हैं कागज में लिखाने से।।
विशद संस्कार पाते हैं लोग जीवन में अपने भी।
श्रेष्ठ शुभ कार्य इस जग में स्वयं ही कर दिखाने से।।

36. आप कौन से मूर्ख है

लोग अपनी बुद्धि के अनुसार वार्तालाप किया करते हैं।
मन में शांति चाहने वाले प्रभु नाम का जाप किया करते हैं।।
बिना सोचे समझे काम करने वाले संसार में प्यारे भाई।
अपनी ही भूल पर विशद पश्चाताप किया करते हैं।।

राजस्थान प्रान्तांतर्गत ग्राम आदेशपुर में सेठ भूरामल अपने पूर्व पुण्य के उदय से धन–धान्य से फलीभूत थे। किसी चीज की कोई कमी नहीं थी। यदि कुछ कमी थी तो यही कोई उनकी कमी बताने वाला नहीं था। शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत हो रहा था। एक पुत्र था सोनू, जो पिता की दौलत के नशे में कहें या माँ के लाड़–प्रेम में कहे या पूर्व के कर्म के फल से कहें। पढ़ने के नाम पर जीरो लड़ने, जिद करने के नाम पर हीरो। समय व्यतीत हुआ, लड़का बड़ा हो गया। पड़ौस के गाँव में सेठ बिहारीलाल की पुत्री सोनम से उसकी शादी हो गई, फिर भी जैसा था शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत हो रहा था। एक बार नगर में एक आयोजन हुआ। नगर के सभी लोग एकत्र हुए, यहाँ तक कि जो लोग बाहर नौकरी या व्यवसाय करने लगे वह भी कार्यक्रम में शामिल हुए। सभी अपनी–अपनी मस्ती में या अपनी जिन्दगी के भूत–भविष्य–वर्तमान की चर्चा कर रहे थे। सोनू के मित्र बैठकर चर्चा कर रहे थे। एक ने कहा– यार राजेश आज कल कहाँ रहते हो, मिलना ही नहीं हो पाता। राजेश ने कहा–यार दिल्ली में ट्रांसपोर्ट का कार्य कर रहे तो टाइम ही नहीं मिलता। तभी राजेश ने सुनील से पूछा और सुनील आपका क्या हाल है ? सुनील ने भी कहा– क्या बताएँ बाम्बे में फैक्ट्री डाल रखी उसका मैन्टीनेन्स मिलाने में ही टाइम पूरा हो जाता। किसी से बात करने की भी फुर्सत नहीं मिलती।

तभी सुनील ने विजय की ओर इशारा करते हुए कहा और विजय तो ईद के चाँद हो रहे हैं, कभी याद ही नहीं करते। तब विजय ने कहा–यार, अमेरिका में जाना आना रहता है, इतनी व्यस्तता रहती है कि कभी–कभी तो खाना खाने के लिए भी टाइम नहीं निकल पाता। अंत में राजेश ने सोनू की ओर इशारा करते हुए और सोनू तुम्हारा क्या चल रहा है ? कौन सा काम प्रारम्भ किया। सोनू शर्मिन्दा होकर चुप रहा, तब विजय ने तपाक से मजाक करते हुए कहा– वह बेकाम करता है। सभी हँसने लगे।

सोनू को यह बात राश नहीं आई। वह घर जाकर पिताजी से बोला– पिताजी मैं तो लंदन जाकर व्यापार करूँगा। मेरे लिए आप बीस लाख रुपये बैंक से निकलवा दीजिए तब पिता भूरामल ने कहा– यह क्या पागल जैसी बात कर रहा है ? विदेश जाना क्या मजाक है जो तू विदेश जाएगा। चल भोजन करके सो जा किन्तु सोनू के दिमाग में बात बैठ चुकी थी। वह कहाँ मानने वाला था, जिद कर गया। जब तक लंदन जाने का इंतजाम नहीं होगा तब तक मैं खाना नहीं खाऊँगा। दो दिन व्यतीत हो गया, पिता ने मजबूर होकर कुछ रुपये दिए और वह चल देता है लंदन। कुछ व्यापार इत्यादि कभी किया नहीं था, क्या करें वहाँ पर होटल में वैटर का काम करने लगा।

लगभग डेढ़ वर्ष व्यतीत हो गया। कभी–कभार कोई सूचना आ जाती तो ठीक वरना वहीं पर खाता–पीता और पड़ा रहता। गर्मी का समय आया एक दिन सेठ की बहू सोनम को पानी भरने गाँव के बाहर खेत में जाना पड़ा। पानी भर के आते समय आशा अचानक रोने लगी। तब सोनम ने कहा– अरे! आशा क्या हुआ, क्यों रोने लगी। तब आशा ने कहा– आज अपने श्रीमान्जी

की याद आ गई, उनके स्वर्गवास हुए पूरा एक वर्ष हो गया। तब सोनम ने उसे समझाते हुए कहा– छोड़ो आशा रोने से क्या लाभ है, जो होना था सो हो गया, अब कब तक इस प्रकार से अपने आपको रूलाती रहेगी। दुनियाँ में कौन किसका है ? दो दिन की खुशी जिन्दगी का रोना है। अरे ! तेरे तो हैं नहीं इसलिए विधवा है, मेरे तो होते हुए विधवा हो रही हूँ। इस प्रकार वार्ता करते हुए चल रही थी। अचानक सेठ भूरामल कहीं से आकर पीछे चलते हुए सारी वार्ता सुन रहे थे। सुनकर भूरामल से नहीं रहा गया और घर जाकर पेन कागज उठाया और पत्र में लिखकर भेज दिया।

बेटे सोनू !

तू जब से घर से गया तो आने का नाम ही नहीं लिया। जरा सोचना चाहिए था कि घर पर भी मेरे कोई हैं, बहू सोनम आज कह रही थी, मेरे तो होते हुए मैं विधवा हो रही हूँ, जरा सोच क्या तेरा इस प्रकार से रहना उचित है। आखिर बहू सोनम की क्या स्थिति हो रही है, अब तू विचार कर कि क्या उचित है ?

आपका पिता
भूरामल

जैसे ही पत्र सोनू को प्राप्त हुआ, वह रोने लगा, मेरी पत्नी विधवा हो गई। आस–पड़ौस के लोग आकर समझाने लगे, कोई मजाक करने लगे, कैसा पागल है किन्तु वह कहाँ मानने वाला था ? दो–तीन दिन व्यतीत हो गया कुछ भी खाया–पिया नहीं और लगा रोने को तब पड़ौस में रहने वाली मालती ताई से उसके हालत नहीं देखी गई, उसने जाकर कहा– क्या पागलपन कर रहा है, तेरे होते हुए तेरी पत्नी विधवा कैसे हो सकती है ? तब

वह बोला– हाँ मेरे होते हुए मेरी बुआ विधवा हो गई, मेरी ताई विधवा हो गई, मेरी दादी विधवा हो गई तो पत्नी विधवा क्यों नहीं हो सकती। सुनकर मालती को भी हँसी आ गई। फिर भी मालती ने हाथ पकड़कर कहा– चल मेरे घर, पहले नहाकर खाना खा फिर जो होगा देखा जाएगा। हम तेरे घर का रिजर्वेशन करा देंगे, जाकर देख लेना कि पत्नी विधवा हुई कि नहीं, सुनकर मान गया और दो दिन बाद वहाँ से चल देता हैं घर की ओर, घर जाकर देखा तो पत्नी घर पर थी। सभी प्रसन्न हुए, वह सारी बात भूल गया। अरे ! पत्नी तो जैसी थी वैसे ही है, खुश होकर सोनू आनन्दपूर्वक रहने लगा।

कुछ वर्ष व्यतीत होते ही उसके पिता का मरण हो गया। वह बहुत रोया, लोगों ने आकर समझाया। अरे भाई जो होना था, सो हो गया, मरने वाला लौट के तो आयेगा नहीं, बेटा चिंता मत करो, कोई समस्या हो तो बताना हम तो हैं। वह शांत हो गया और परिवार में शांतिपूर्वक रहने लगा। कुछ दिनों बाद माँ का भी मरण हो गया। पुनः वियोग में रूदन करने लगा, कुछ महिलाएँ आकर समझाने लगी। बेटा चिंता न करो, तुम्हारी माँ मर गई कोई बात नहीं हम तो हैं यदि कोई समस्या हो तो हमारे लिए याद कर लेना। कुछ दिनों बाद बहिन का मरण हुआ तो पुनः रोने लगा। कई बहिनों ने आकर सान्त्वना दी, कहा भैया चिंता न करो हम तो आपकी बहिनें हैं, रक्षाबंधन को रक्षासूत्र बाँध दिया करेंगे।

गतिशील बनो मंजिल पास नहीं है।
काल चक्र गतिमान किसी का दास नहीं है।।
जीवन की हर श्वांसे सार्थक करलो प्यारे भाई।
जीवन में पलभर का विश्वास नहीं है।।

कालचक्र गतिमान है, अतः उसकी गति को कोई नहीं जान सकता। कुछ दिनों बाद उसकी पत्नी का निधन हो गया। अब तो बेचारा बेसहारा हो गया और रोते-रोते बेहाल हो गया दो-तीन दिन व्यतीत हो गए। उसकी हालत बिगड़ने लगी, उसकी बिगड़ती हुई हालत देखकर पड़ौस में रहने वाली चाची ने जाकर कहा-बेटा ! बहुत हो गया, अब शांत हो जा, जो होना था सो हो गया अब रोने से क्या लाभ है ? मेरी समझ में नहीं आता जब तेरे पिता का मरण हुआ, माँ का मरण हुआ, बहिन का मरण हुआ। तब इतना नहीं रोया जितना पत्नी के मरण पर रो रहा है। तब रोते-रोते सोनू ने कहा- चाची, जब पिताजी मरे थे तब अनेक लोगों ने आकर कहा था-बेटा, चिंता मत कर हम तो हैं, कोई समस्या हो तो बताना। जब माँ मरी तो अनेक माताओं ने कहा- बेटा, चिंता न कर हम तो है। बहिन मरी तो अनेक बहिनों ने आकर कहा- भैया चिंता न करें हम तो हैं किन्तु आज पत्नी मरी तो किसी ने भी आकर नहीं कहा कि चिंता नहीं करो, पत्नी मर गई तो कोई बात नहीं हम तो हैं, चाची को भी हँसी आ गई। उसने कहा- पागल दुनियां की यही रीत है, शास्त्र का भी यही कथन है कि पत्नी के अलावा संसार की सारी स्त्रियाँ माँ बहिन की भाँति हैं।

दुर्भाग्य के कारण इंसान दीन हीन होता है।
अनेकों गम पाकर के गमगीन होता है।।
यह भी कर्म का उदय है प्यारे भाई जीवन में।
कर्मोदय में इंसान बुद्धिहीन होता है।।

***

37. कर्म का फल

बालचन्द वास्तव में बालचंद ही था जो संसार के कार्यों में बहुत रुचि रखता था किन्तु ज्ञान, ध्यान, साधना के नाम पर शून्य था **'जैसे किए का तैसा फल'**। सेठ बालचंद का मरण हुआ तो गुमानपुर में सेठ गुमानमल के गृह पुत्र रूप में जन्म लिया। बड़ा होते ही बच्चे को सेठ ने गुलाबपुर के आश्रम में पढ़ने भेज दिया किन्तु पूर्व कर्मवशात् बालक पढ़ता तो कम लड़ता अधिक था। आये दिन पण्डितजी के पास सेठ पुत्र विजेन्द्र की शिकायत आती रहती थी। पण्डितजी सुनते-सुनते परेशान होने लगे। अनेक बार दण्ड दिया, घर भेजने की धमकी दी किन्तु विजेन्द्र उस समय तो गल्ती मान लेता; लेकिन करता वही शैतानी था। एक दिन पण्डितजी ने कहा- अब तो तेरे लिए घर छोड़कर आएंगे तब वह रोने लगा, गुरुजी हम घर नहीं जाएंगे। आप हमारे लिए कोई काम सिखा दीजिए तब पण्डितजी ने पुनः सोचा- चलो ठीक है, बच्चों के बीच रहकर लड़ता है, अब कल से इसको औषधि काम के लिए साथ ले जाना चाहिए और कहीं भी किसी के यहाँ दवा करने जाते तो साथ में विजेन्द्र को भी ले जाते थे। एक दिन एक बुढ़िया को बुखार आ रहा था। वैद्यजी उसके घर जाकर हाथ देखते उससे पूछताछ के बाद वैद्यजी ने कहा- इस बुढ़िया माँ ने अपथ्य का सेवन किया है, इसे यह दवाई दे देना ठीक हो जाएगी। ऐसा कहकर वैद्यजी घर की ओर चल दिए रास्ते में विजेन्द्र ने पण्डितजी से पूछा- पण्डितजी आपने हाथ देखकर कैसे जाना कि बुढ़िया ने अपथ्य का सेवन किया। तब वैद्यजी ने कहा- पागल हाथ में थोड़े ही लिखा होता है। हाथ में तो नब्ज से वात, पित्त, कफ का ज्ञान होता है, वह तो उसकी चारपाई के नीचे

मूली के पत्ते पड़े थे, उसे देखकर कह दिया कि अपथ्य का सेवन किया है, मूली खाई है।

दो–तीन दिन व्यतीत होने के बाद एक किसान आया। उसने कहा– वैद्यजी कहाँ गये, तब विजेन्द्र ने कहा– वैद्यजी तो बाहर गये, तीन–चार दिन बाद आएंगे। तब किसान ने कहा– मेरे पिता का स्वास्थ्य ठीक नहीं है, आप कुछ जानते हो तो चलकर देख लीजिए। विजेन्द्र ने कहा– हाँ, ठीक है। चलते हैं, यह थैला साथ में ले लीजिए। किसान के साथ घर पहुँचकर पिता का हाथ देखा और चारपाई के नीचे झांककर देखा तो चारपाई के नीचे कोयला पड़ा था। विजेन्द्र ने कहा– बाबा ने अपथ्य का सेवन किया है, कोयला खाया है। तब किसान ने कहा– पागल कहीं के कोई कोयला भी खाता है क्या ? चल भाग यहाँ से, वैद्यजी से शिकायत की तो वैद्यजी ने डांटा। तब वह बोला–वैद्यजी आज से ऐसा नहीं कहूँगा।

कुछ दिनों बाद एक व्यक्ति वैद्यजी के पास आया, उसकी आँख में दर्द था, तब वैद्यजी ने उसे गरम पानी में नमक डालकर सिकाई की तो उसके लिए आराम हो गया और चला गया। कुछ दिनों बाद एक नाई के बच्चे की आँखों में दर्द था। वैद्यजी के पास आया, वैद्यजी बाहर गये थे। तब नाई ने विजेन्द्र से कहा– भाई आप जानते हो तो दवाई कर दीजिए। तब विजेन्द्र ने कहा– हाँ, मैं जानता हूँ और पानी गर्म करके नमक डालकर बच्चे की आँखों में डाल दिया। बच्चा जोर से चीखा और उसकी आँख खराब हो गई। नाई ने वैद्यजी से शिकायत की तो वैद्यजी ने पश्चात्ताप किया। बच्चे को डांटा और कहा– चल भाग जा, यहाँ अब तेरे लिए नहीं रखूँगा।

कुछ दिनों बाद एक किसान का ऊँट बीमार हुआ। उसके गले में कुछ

अटक रहा था। वैद्यजी के पास लाया, वैद्यजी ने कहा– उसे नीचे लिटाइये, लोगों ने उसे बांधकर नीचे लिटाया। वैद्यजी ने पूछा– यह घास चरने कहाँ गया था। तब किसान ने कहा– जंगल गया था। वहाँ से खरबूजा के खेत में जा घुसा था। वहाँ से घर लाते ही कुछ खाता–पीता नहीं है। वैद्यजी ने गर्दन के नीचे शिला रखकर एक लोढ़ी से गले में धीरे–धीरे ठोकर दी जिससे ऊँट के गले में फंसा हुआ खरबूजा फूट गया और ऊँट ठीक होकर चरने लगा, पानी पीने लगा। एक दिन वैद्यजी बाहर थे, तभी छीपा की मां के गले में दर्द हो गया, वह माँ को लेकर वैद्यजी के पास लाया। पता चला वैद्यजी घर नहीं है, बच्चे ने कहा– मैं इसे ठीक कर सकता हूँ, उसने पहले वृद्धा माँ के गले पर हाथ फेरा, फिर थोड़ा सा तेल लगाया। बाद में गर्दन के नीचे शिला रखकर पत्थर से ठोक दिया तो वृद्धा माँ के प्राण–पखेरु उड़ गये। छीपा रोने लगा, अब करता भी क्या ? वैद्यजी के आते ही छीपा ने सारी घटना सुनाई तब वैद्यजी ने क्षमायाचना की और उसी दिन विजेन्द्र को घर से निकाल दिया।

अंत में विजेन्द्र न तो पढ़ ही सका, न कुछ सीख सका, कहीं का नहीं रहा, हर जगह ठोकर खाकर जिन्दगी व्यतीत हुई। इसलिए कहा है कि जिन्दगी में ज्ञान, ध्यान, साधना का फल ही इंसान को इंसान बनाता है। अन्यथा इंसान शैतान और हैवान बन जाता है।

अधर्म इंसान को हैवान बना देता है।
दुष्कर्म इंसान को शैतान बना देता है।।
धर्म की महिमा कहाँ तक कहे बन्धु।
धर्म इंसान को भगवान बना देता है।।

38. जैसे को तैसा

विदेश में एक कम्पनी ने अथक परिश्रम से कुत्ता काटने के जहर को दूर करने की दवा तैयार की और यह दवा सभी देशों में चलने लगी। उससे कंपनी ने बहुत धन अर्जित किया। उस दवा की मुनाफा देखकर भारतवासी सेठ मिश्रीलाल के मन में लालच आ गया और सेठ मिश्रीलाल ने चंद नोटों की खातिर इंसानियत को ताक पर रखकर नकली दवा बनाकर बेचना प्रारम्भ कर दिया।

कम कीमत और अच्छी लेबल की बलिहारी कि वह दवा इतनी अधिक चल पड़ी कि असली दवा खरीदने वाले भी नहीं मिले, समय अपनी गति से चल रहा था। मुख्य कंपनी घाटे में आने लगी, काफी प्रयत्न करने के बाद भी विदेशी कंपनी पुनः घाटे से नहीं उबर सकी, आखिर समय आया तो कंपनी बंद हो गई।

यहाँ सेठ मिश्रीलाल अपनी चाल पर फूला नहीं समा रहा था। वह विचार कर रहा था कि मैंने शायद नये युग का ही प्रारम्भ कर लिया। एक पर एक नये-नये मकान बना रहा था तथा एक पर एक गाड़ियाँ लिए जा रहा था। यहाँ तक कि राजाशाही काम चलने लगा था। वह तो संसार की स्थिति और दशा को भूल ही गया था। जिन्दगी के भोग और एशोआराम को ही सब कुछ मान लिया था। सेठ का पुत्र अजय स्कूल पढ़ने जाता वापिस आकर मित्रों के बीच खेलने को जाता तो मिश्रीलाल हमेशा बच्चे को मना करता देख बेटा ! तू दीन-हीन गरीब बच्चों के साथ खेलने मत जाया कर इससे मेरी इज्जत खराब होती है कि सेठ मिश्रीलाल का बेटा गरीब बच्चों के साथ खेलता है।

लोग कहते हैं अहंकार तो रावण का भी नहीं रहा और यों कहें कि पाप का घड़ा ज्यादा समय तक नहीं चलता। जल्दी फूट जाता है। एक दिन अजय स्कूल से लौट रहा था कि रास्ते में कुत्ते ने काट लिया, उसे बचाने का भरपूर प्रयास किया। अंत में विदेशी फैक्ट्री से प्राप्त दवा लाने की बात कही गई। सेठ मिश्रीलाल फैक्ट्री मालिक के पास गया कि कुत्ता काटने के जहर उतारने की दवा दे दें किन्तु विदेशी फैक्ट्री तो बंद हो चुकी थी। हजार लाख करोड़ रुपया देने पर भी दवा नहीं मिली। आखिर पुत्र अजय पागल होकर भौंकने लगा, जगह-जगह ठोकर खाते हुए अंत में उसका देहांत हो गया। मिश्रीलाल अपने इकलौते पुत्र के मरण पर अत्यन्त शोक विह्वल हुआ।

लोगों के द्वारा यह चर्चा कानों कान पहुँची कि नकली दवा की फैक्ट्री चलाकर सेठ ने तो पता नहीं कितनों के बेटों की जान ली है। यदि एक बेटा स्वयं का मर गया तो इतना परेशान होने की क्या बात है ? यह सुनकर सेठ की आँखें खुल गईं और उस समय से सेठ ने संकल्प कर लिया कि आज के बाद इस प्रकार का काम नहीं करूँगा और जो दौलत कमाई है वह गरीबों की बीमारी में लगाऊँगा।

बनावटी वृक्ष में कहीं फल नहीं होते।
पर्वत के ऊपर कहीं दलदल नहीं होते।।
तर्क और जिज्ञासाओं का तो समाधान है।
किन्तु कुतर्कों के कहीं कोई हल नहीं होते।।

***

39. लालच बुरी बलाय

विश्व प्रसिद्ध तैराक का फोटो अखबारों में छप रहा था तथा उसे प्राप्त गोल्ड मैडल को देखकर सेठ कांतिलाल के पुत्र विजितेन्द्र ने अपने पिता से कहा– मैं तैरना सीखना चाहता हूँ। पिता ने बात टालते हुए कहा– अपने टीचर से मिलो वह सिखाएंगे। विजितेन्द्र ने स्कूल जाकर अध्यापक से कहा– मैं तैरना सीखना चाहता हूँ अध्यापक ने तैरने की विधि पुस्तक के आधार पर बता दी कि तुम पानी में जाना उल्टे लेटकर हाथ–पैर चलाना प्रारम्भ कर देना। विजितेन्द्र ने गुरुजी से कहा– नहीं, मैं पानी में नहीं उतर सकता हूँ। आप तो यहीं पर तैरना सिखा दीजिए। फिर अध्यापक ने कहा– तब तो तुम तैरना कभी भी नहीं सीख सकते। अन्त में हारकर विजितेन्द्र को पानी में जाना पड़ा। कुछ ही दिनों में अध्यापक ने विजितेन्द्र को अच्छा तैराक बना दिया। कभी भी प्रतियोगिता होती तो विजितेन्द्र हमेशा स्वर्ण पदक प्राप्त करता था।

तैरने की शिक्षा यद्यपि पुस्तक में लिखी थी, फिर भी विजितेन्द्र तैरना नहीं सीख पाया। गुरु की शिक्षा और सागर के पानी में पहुँचने पर ही तैरने की कला प्राप्त हो सकी।

कोई व्यक्ति भवसागर में तैरकर पार करना चाहें तो सबसे पहले तो गुरु की शिक्षा प्राप्त करनी होगी। मात्र पुस्तक के भरोसे भवसागर से तैरने की कला काम नहीं कर सकेगी तथा ज्ञान, ध्यान, तप, साधना भी करनी पड़ेगी। मात्र पढ़ने से कभी भी संसार सागर पार नहीं हो सकेगा।

भले ही कोई जीवन पर्यन्त किताबी कीड़ा बनकर ज्ञान का बुद्धि का विकास कर बुद्धिमान बन जाए लेकिन उनके अन्दर आध्यात्मिकता का

विकास नहीं हो सकता। भौतिक विकास हो सकता है पर आत्मिक आध्यात्मिक विकास नहीं हो सकता।

जैन सिद्धांत चर्चा नहीं चर्या पर विश्वास रखता है। चर्चा तो मात्र वाणी का विलास है। पुद्गल वर्गणाओं का आदान–प्रदान है किन्तु चर्या अंतश् की भावना का परिणाम है, आत्मा का लिबास है। शरीर का लिबास तो जीव अनंतकाल से प्राप्त करता हुआ कई भव बिता चुका है और शरीर का लिबास पाकर अनंतकाल तक बिताता रहेगा। किन्तु यदि एक बार आत्मा का लिबास प्राप्त कर लिया तो फिर अन्य कोई लिबास की आवश्यकता ही समाप्त हो जाएगी। अतः भगवान महावीर का सिद्धांत मानकर एक बार भी आत्मा का लिबास निश्चय रत्नत्रय को प्राप्त करते ही हमेशा को आत्मिक आनंद प्राप्त हो जाएगा।

उसी प्रकार भक्त ने कहा– गुरुजी आत्मा का आनन्द कैसा होता है, गुरु ने जो शिक्षा देकर ध्यान की प्रक्रिया बताई फिर भी आत्मा का आनन्द प्राप्त नहीं हुआ तब गुरु ने कहा– मुनि बनना होगा तब भक्त ने कहा–मुनि बनने से तो डर लगता है तब गुरु ने कहा फिर तो आत्मा का आनन्द प्राप्त नहीं हो सकता। भक्त गुरु–आज्ञा से संत बन गया और आत्मा का आनन्द पाकर भगवन्त बन गया।

पत्थरों पर कमल कभी खिल नहीं सकते।
हिलाने से पर्वत कभी हिल नहीं सकते।।
सदियाँ गुजर गई भगवान को खोजते हुए।
किन्तु वीतरागी भगवंत समान मिल नहीं सकते।।

***

40. गुरु और शिष्य

जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्रांतर्गत मध्य प्रदेश के जिला श्योपुर के समीप मधुर आश्रम में गुरु आत्माराम जी अपनी साधना के साथ भव्य जीवों को कल्याण की राह पर चलाते थे। उनके पास एक शिष्य ब्रह्मचारी पराग बहुत समय से गुरु–सेवा में रत रहता था। गुरु भक्त शिष्य भूल ही गया कि मैं किसी आश्रम में हूँ बल्कि वह तो अपने गृह में पिता परिवार के समान ही मानने लगा था। कुछ वर्षों बाद एक शिष्य और प्रशम ब्रह्मचारी बनकर गुरुजी के आश्रम में रहने लगा। गुरु ने आश्रम में सेवा का कार्य एक दिन नवीन ब्रह्मचारी प्रशम को दिया उसी समय प्रशम आया। पराग ने प्रशम को गुरु का काम करते देखा तो खेद–खिन्न होकर अपने कमरे में जाकर अत्यन्त भाव–विह्वल होकर घंटों तक रोता रहा। उसने आश्रम में आये भक्त से कहा– अब गुरु का प्रेम छिन गया है, गुरु की मेरे प्रति दृष्टि बदल गई है। भक्त ने पूछा– नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। यह आप कैसे कह रहे हैं तब शिष्य ने कहा– गुरुजी कोई भी कार्य के लिए हमेशा मुझे ही कहते थे किन्तु आज गुरुजी ने आश्रम की व्यवस्था का कार्य प्रशम को दे दिया, मुझे काम नहीं बताया।

भक्त जोर से हंसने लगा, बस इतनी सी बात है तब पराग ने कहा– आपको मजाक लग रहा है लेकिन यह सही है कि गुरुजी की दृष्टि मेरे प्रति बदल गई है। तब भक्त ने कहा–भाई दृष्टि गुरु की नहीं, आपकी बदल गई है। शायद आपके लिए अपना गुरु भाई आना अच्छा नहीं लगा। आप बताइये आपके हाथ में कितनी उँगलियाँ हैं। पराग ने कहा– पाँच। तब भक्त ने पूछा–इनमें से कौन सी श्रेष्ठ है, कौन सी व्यर्थ है। तब पराग ने कहा– सभी उपयोगी हैं। अच्छा अब बताइये जब भोजन करते तो कौन सी उँगली से खाते हैं, कौन सी अलग रखते

हैं। सभी से खाते हैं, तब भक्त ने कहा–पराग, जिस प्रकार आपके हाथ में पाँच उँगलियाँ सभी उपयोगी और समान हैं, जिस ऊँगली की जहाँ उपयोगिता होती वहाँ उसका प्रयोग करते हो, यदि एक ही उँगली होती तो किससे कार्य करते। सारा काम एक ही ऊँगली से किया जाता।

अब आपकी समझ में आ गया होगा कि गुरु के लिए सभी समान हैं। दृष्टि गुरु की नहीं, आपकी बदल गई है। शायद आपको अपना गुरु भाई का आना अच्छा नहीं लगा। तुमने गुरु पर अपना एकाधिकार मान लिया है। अपनी सेवा से गुरु को खरीदने की व्यर्थ कोशिश की है तो तुम्हें अच्छा नहीं लगता है। तुम यही चाहते हो। गुरुजी हँसे, बोले– काम कराएँ तो सिर्फ मुझसे यह तो ऐसे हुआ कि गुरुजी भोजन करें तो मेरे द्वारा, श्वांस ले तो मेरे रहते शेष समय रोके रहें। यह अधिकार प्रेम नहीं घृणा का आयाम है। एक शिष्य को इतनी बड़ी भूल कभी नहीं करना चाहिए बल्कि प्रसन्न होना चाहिए कि आज गुरु सेवा के लिए मेरा मित्र आया है, अब गुरु–सेवा जो मैं कर रहा था उससे दुगुनी होने लगेगी।

गुरु–शिष्यों की श्रेष्ठ मुस्कान होते हैं,
गुरु शिष्यों की आन–बान–शान होते हैं।
शिष्य गुरु को कुछ भी माने, कुछ भी कहें,
गुरु के लिए सभी शिष्य समान होते हैं।।

गुरु ज्ञानी गुरु ध्यानी गुरु विद्वान् होते हैं,
गुरु संसार सागर में श्रेष्ठ गुणवान होते हैं।
गुरु महिमा को इस मुख से कथन करना बड़ा मुश्किल,
गुरु भक्तों के इस जग में 'विशद' भगवान होते हैं।।

41. दुर्भावना का फल

ग्राम माण्डलगढ़ में सभी समाज के लोगों का निवास था। उनमें एक कुम्हार भी रहता था। मिट्टी के बर्तन एवं अनेकों खिलौने आदि बनाकर अपनी आजीविका करता था। उसी नगर में मनोहर नाम का माली था, यहीं निवास करता था। अपने खेत में सागभाजी उगाकर अपनी आजीविका चलाता था।

एक बार पास ही के तीर्थ पर मेला का आयोजन चल रहा था। दोनों ने व्यापार करने के लिए मेला में जाने का विचार किया लेकिन माल कैसे लेकर जावें। तब मूलचंद कुम्हार एवं मनोहर माली ने मिलकर विचार किया, क्यों न एक ऊँट किराये से लिया जाए और उस पर अपना माल लादकर ले जाया जाए। दोनों को बात जम गई, एक तरफ कुम्हार ने अपने घड़े लाद दिए दूसरी और माली ने सागभाजी और चल पड़े मेला की ओर। रास्ते में देखा कि ऊँट ने अपनी गर्दन मोड़ी और सागभाजी खाना प्रारम्भ कर दिया, कुम्हार साथ चल रहा था। उसने विचार किया ऊँट खा रहा है तो खावे, हमें क्या लेना, हमारा थोड़े ही कुछ बिगाड़ हो रहा है। हमारे बर्तन तो ऊँट खा नहीं सकता। आगे माली ऊँट की लगाम लेकर चल रहा था, पीछे कुम्हार चल रहा था। दोनों आगे बढ़ते जा रहे थे। ऊँट ने लगभग आधी सागभाजी खा डाली अब उसका मुँह उसके पास नहीं आ रहा था। एक ओर सागभाजी कम होने से दूसरी ओर कुम्हार के बर्तनों का भार बढ़ गया। आगे बढ़ने पर ऊँट ने गर्दन को जोर से मोड़ा तो देखा कि उस पर लादे गये बर्तन भड़भड़ा के नीचे जा गिरे, सारे बर्तन फूट गये। जब माली ने मुड़कर देखा तो उसकी सागभाजी आधी बची। उसने कुम्हार से

कहा– अरे भाई ! मेरी सागभाजी इतनी खा डाली तुमने ध्यान नहीं दिया। तब कुम्हार ने अपनी गलती स्वीकार करते हुए कहा– मुझे अपनी स्वार्थपरता की सजा मिल गई। मैंने सोचा कि ऊँट सागभाजी खा रहा है तो इसमें मेरा क्या हर्ज है, खाने दो। देखते ही देखते एक ओर साग का वजन कम होने से बर्तन का भार बढ़ गया और ऊँट पर लदा माल नीचे गिरने से मेरे सारे बर्तन फूट गये। मेरी सारी मेहनत बेकार गई। आपका तो कम से कम आधा माल बच ही गया लेकिन मेरी दुर्भावना ने मुझे मिट्टी में मिला दिया। अब आज से मैं संकल्प लेता हूँ कि कभी भी इस प्रकार किसी के साथ दुर्भावना नहीं रखूँगा।

कभी दुर्भावना मन में किसी से भी नहीं लाओ।
स्वयं अपने ही जैसा तुम सभी को आप अपनाओ।।
विशद दुर्भावना का फल कुंभकार ने यहाँ पाया।
सभी से प्रेम पाकर के हृदय में आप हर्षाओ।।

***

42. बुद्धूराम

ज्ञानावरणी कर्म के क्षयोपशम से जीव ज्ञानी होता है।
ज्ञान के एकाग्र चिंतन से जीव सम्यक् ध्यानी होता है।।
ज्ञान स्वभाव और विभाव गुण व्यवहार से होता है।
ज्ञानावरणी कर्म के उदय से जीव अज्ञानी होता है।।

राजस्थान प्रान्तान्तर्गत ग्राम मानपुरा में सेठ बिरदीचंद निवास करते थे। उनके एक पुत्र था जिसका नाम था राहुल, जो माता–पिता के लाड़–प्यार में पला बड़ा हुआ था। जब उसकी उम्र पढ़ने की हुई तो पिता ने उसे आश्रम में पढ़ने भेज दिया। पूर्व कर्म के उदय से बुद्धि हीनता के कारण पढ़ने में तो मन नहीं लगता था किन्तु शैतानी करने में दिन–प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त हो रहा था। जब रोज–रोज शिकायत आने लगी तो गुरुजी ने उसके पिता को बुलाकर उसकी शिकायत की। पिता ने उसे समझाया और डांटा भी, कुछ दिन तो राहुल ठीक रहा, कुछ दिनों बाद पुनः वही क्रिया प्रारम्भ हो गई। गुरुजी ने कई बार सुधार की कोशिश की किन्तु कुछ भी अंतर नहीं पड़ा। तब उन्होंने उसके घर छोड़ आने का निश्चय किया। गुरुजी अधिक उम्र के थे तथा शरीर से कमजोर स्थिति के थे। जब राहुल को घर छोड़ने जाने लगे तो गुरुजी घोड़े पर बैठ गये तथा राहुल पीछे चलने लगा। आगे एक पेड़ के नीचे रुककर गुरुजी ने भोजन करने का विचार किया। उसके पूर्व अपना पाठ करने के लिए डायरी निकालने की कोशिश की तो डायरी नहीं है। उन्होंने राहुल से कहा– डायरी नहीं मिल रही है तब राहुल ने कहा–गुरुजी वह तो पीछे गिर गई। गुरुजी ने कहा–तूने उठाई क्यों नहीं? तब राहुल ने कहा–गुरुजी आपने कब कहा था डायरी गिरे तो उठा लेना तब गुरुजी ने कहा जा लेकर आ। ठीक है – और पीछे जाकर डायरी उठाकर ले आया।

पूजा–पाठ, भोजन के बाद गुरुजी पुनः घोड़े पर बैठकर आगे चलने लगते हैं। रास्ते में घोड़े ने गोबर (लीद) कर दिया तो राहुल ने अपने तौलिया में उठा लिया और लेकर चलने लगा। जब गुरुजी अगले स्थान पर रुके तब राहुल ने गुरुजी को देते हुए कहा– गुरुजी घोड़े से यह गिर गया था, ले लीजिए। गुरुजी ने खोलकर देखा– अरे पागल, लीद (गोबर) क्यों ले आया। तब राहुल बोला– क्यों ले आया। तब राहुल बोला– गुरुजी, नहीं उठाते तो डांटते और उठाकर लाते तो डांटते, मेरी समझ में नहीं आता तब आप हमको लिखा दीजिए कि क्या उठाना, क्या नहीं उठाना है। तब गुरुजी ने सारे सामान की लिस्ट बनाकर लिखवा दी और आगे बढ़ने लगे। आगे जंगल में जा रहे थे कि अचानक जंगली जानवर भागता हुआ आया जिसके कारण घोड़ा चमक गया और पंडितजी एक गड्ढे में जा गिरे। राहुल ने तुरन्त ही लिस्ट निकाल कर देखा, क्या उठाना, क्या नहीं उठाना, उसमें पंडितजी का नाम नहीं था। इसलिए राहुल ने घोड़े को आगे बढ़ाया और एक गाँव में जाकर रुक गया। यहाँ पंडितजी गड्ढे में पड़े चीख रहे थे। तभी एक सज्जन वहाँ से निकला, उसने आवाज सुनी तो जाकर देखा, पंडितजी गड्ढे में पड़े हैं। उसने पंडितजी को बाहर निकाला, हाथ–पैर की मालिश की और पूछा–पंडितजी आप यहाँ कैसे ? तब पंडितजी ने सारा हाल कह सुनाया– वह व्यक्ति पंडितजी को हाथ पकड़कर गाँव तक ले आया। वहाँ देखा कि राहुल पेड़ के नीचे बैठा हुआ है, पास ही घोड़ा बंधा है। व्यक्ति ने राहुल को डांटते हुए कहा– क्यों रे ! पागल पंडितजी घोड़े से नीचे गिर गये थे। तूने उठाया क्यों नहीं ? तब राहुल ने भी जोर से कहा– लो देख लो यह रही लिस्ट इसमें कहाँ लिखा है कि पंडितजी गिर जावें तो उठा लेना। सुनकर व्यक्ति के लिए हँसी आ गई।

फिर भी हंसी को दबाते हुए राहुल को डांटकर समझाया कि आगे कभी ऐसी गलती नहीं करना।

पण्डितजी राहुल को घर छोड़कर वापिस आ गये। राहुल अनपढ़, गंवार बनकर रह गया। वहाँ एक व्यक्ति पाँच सौ रु. में बी.ए. की डिग्री बेच रहा था। राहुल ने सोचा– सस्ती डिग्री मिल रही है, खरीदना चाहिए। यदि बी.ए. की डिग्री प्राप्त करते तो पन्द्रह वर्ष लग जाते और लाखों रुपये खर्च होते सोचकर एक डिग्री खरीद ली और आगे बढ़ चला, थोड़ा बढ़ते ही सोचा– पुनः इतनी सस्ती चीज मिले न मिले एक और ले लेना चाहिए। उसने कहा– हमको एक डिग्री और दीजिए। तब बेचने वाले ने कहा– अभी आप डिग्री लेकर गये थे न। राहुल घबड़ाया, कहीं गड़बड़ तो नहीं होगा। उसने कहा–हाँ मैं एक डिग्री ले गया था किन्तु अब डिग्री अपने घोड़े को दिलाना चाहता हूँ। डिग्री बेचने वाले ने हँसते हुए कहा– हमारे यहाँ डिग्री घोड़ों को नहीं गधों को दी जाती है। इस प्रकार अनेकों स्थानों पर ठोकर खाना पड़ी। जो जीव ज्ञान, ध्यान, तप पूजा से दूर होते हैं उनकी दशा बुद्धूराम राहुल जैसी ही होती है।

***

नहीं जो धर्म करते हैं कष्ट भारी उठाते हैं,
सिखाने पर भी वे प्राणी नहीं कुछ सीख पाते हैं।।
कर्म का फल उन्हें जग में रुलाता बेरहम होकर,
'विशद' ठोकर जमाने में कई इक आप खाते हैं।।

43. इंसान की कीमत कितनी

राम नगर के राजा रामपाल अपने राज्य में खुशहाली के साथ निवास करते थे। उनका एक पुत्र था जिसे राज्यभार सौंपकर रामजी सन्यासी हो गये।

मंत्री ज्ञानप्रकाश बहुत ही ज्ञानी था, राज्य का संचालन बड़ी चतुराई के साथ चलाने में तत्पर रहता था। राजा और मंत्री दोनों ही एक पर एक ग्यारह थे। सभा में समय–समय पर सभी वर्ग के लोगों की गोष्ठी होती रहती थी। कभी कवि–सम्मेलन तो कभी किसान सम्मेलन तो कभी व्यापारी संघ गोष्ठी इससे समाज में भी भाईचारा का वातावरण था एवं लोग आगे से आगे कार्य करने में संलग्न रहते थे और अपने–अपने कार्य से भी संतुष्ट थे।

एक बार राजकुमार अपनी सभा में बैठे हुए थे कि उसी समय राजपुत्र शिवकुमार घूमते हुए राज्यसभा में पहुँच गया। उस समय व्यापारी सम्मेलन चल रहा था। राजपुत्र को राजा ने अपनी गोद में उठा लिया और उसके साथ प्रेम पुचकार का व्यवहार करने लगा। व्यापारी सम्मेलन के बीच में राजा ने अपनी बात रखते हुए कहा– अच्छा व्यापारियो, बताइये हमारे इस राजकुमार की कीमत कितनी है ? सभी व्यापारी दंग होकर रह गये कि राजकुमार की कीमत क्या बताएँ। जब किसी को उत्तर नहीं सूझा, सभी चुप रह गये। पुनः राजा ने कहा– व्यापारियो, आपको हमारे पुत्र की कीमत बताना होगी। यदि कीमत नहीं बता पाओगे तो जुर्माना किया जाएगा।

सभी को एक सप्ताह का समय दिया जाता है। व्यापारी परेशान हो गये। उन्हें कोई उत्तर नहीं सूझ रहा था। यहाँ एक सप्ताह का समय भी पूर्ण होने जा रहा था। क्या करें, कुछ समझ में नहीं आ रहा है। सभी के बीच में एक ही वातावरण छाया था। एक बुजुर्ग सेठजी ने लोगों से परेशानी जानने की कोशिश की किन्तु लोगों ने उनको शांत रहने को कह दिया। आखिर जब परेशानी का कारण बुजुर्ग सेठ को पता चला तो उन्होंने सभी व्यापारियों को पास बुलाया। कहा– भाई, क्यों परेशान हो रहे हो, राजपुत्र की कीमत तो मैं जानता हूँ।

सभी व्यापारी एक-एक करके बुजुर्ग बाबा से पूछने लगे किन्तु उन्होंने कहा नहीं मैं स्वयं चलकर के राजा से राजपुत्र की कीमत बताऊँगा। आखिर सभी व्यापारियों ने स्वीकार कर लिया और निश्चित समय पर राज्यसभा में उपस्थित हो गये। सभी के मन में चिंता और विस्मय था कि क्या होगा ?

राजा साहब दरबार में उपस्थित हुए, सभी लोगों ने खड़े होकर राजा का अभिवादन किया और अपने-अपने स्थान पर बैठ गये। सभा की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। सभी प्रारम्भिक क्रिया के बाद बात सामने आई। राजा का प्रश्न है राजपुत्र की कीमत क्या है ? व्यापारियों ने खड़े होकर एक ही आवाज में उत्तर दिया- हुजूर हम सब लोगों ने राजपुत्र की कीमत का आंकलन अपने बुजुर्ग दादाजी को सौंपा है, वह राजपुत्र की कीमत बताएंगे।

राजा ने बुजुर्ग दादा का यथायोग्य सम्मान किया और कहा- ठीक है, दादाजी बताइये, हमारे राजपुत्र की कीमत क्या है ? दादाजी ने कहा- हुजूर कीमत तो कीमत है, थोड़ा उन्नीस-बीस होना स्वाभाविक है। आप तो जानते हैं, कोई माल सौ किलो का बोरा है, उसमें 99 भी हो जाता हैं, कभी 101 भी हो जाता है। कोई कपड़ा 100 मी. का है, कभी ढीले हाथ से मापने पर 99 मी. हो, कभी खींचकर मापने से 101 मी. हो जाता है। इसमें कोई कमीवेशी हो जाए तो कोई आपत्ति तो नहीं तब राजा ने कहा- कोई बात नहीं 95% तो सही होना चाहिए। दादा ने कहा- फिर तो ठीक है।

बच्चे को सामने खड़ा करके ऊपर से नीचे तक अच्छी तरह से आंकलन किया और पश्चात् माथे पर दो ऊँगली रखकर राजा से कहा- राजन् इस दो अंगुल स्थान को छोड़कर, इस इंसान की कीमत मात्र एक मजदूर के बराबर मानो। राजा समझ नहीं सका तब दादाजी ने स्पष्ट करते हुए कहा- राजन् ! यह दो अंगुल स्थान में ज्ञान और भाग्य दोनों हैं। यदि यह ज्ञानवान और भाग्यवान है तो राजा महाराज कुछ भी बन सकता है और यदि इसके पास ज्ञान और सौभाग्य नहीं है तो यह मजदूरी करके अपनी आजीविका चलाने से अधिक कुछ भी नहीं कर सकता। राजा को बात समझ में आई और उसने दादा का सम्मान करके पुरस्कृत किया।

44. खाड़ा खोदे और को गिरे स्वयं ही जाय

अकबर और बीरबल के समय की बात है। बादशाह अकबर और बीरबल, दोनों राज्य का संचालन करने में निरन्तर तत्पर रहते थे। अकबर बीरबल की सलाह के बिना कोई भी कार्य नहीं करता था। राज्य का संचालन अच्छी तरह से चल रहा था, सारी प्रजा खुश थी किन्तु लोग कहते हैं कि चन्दा में भी दाग है। यह कहावत सिद्ध है... राजा की हजामत करने वाला नाई यह देखकर दुःखी था कि राजा मंत्री को सबसे अधिक मानता है। नाई प्यारेलाल के मन में मंत्री बनने की लालसा समा गई और वह मायाचारी से कुटिल चाल चलने लगा।

प्यारेलाल बादशाह की हजामत बनाने के बाद सेवा करते हुए चाटुकारिता करते हुए बोला- हुजूर कभी मेरे ये हाथ अपने अब्बा जान की सेवा किया करते थे; किन्तु मेरे लिए बड़ा अफसोस है कि अब्बाजान को जन्नत गये लगभग पन्द्रह वर्ष हो गये। आज तक आपने उनकी कोई खबर नहीं ली। अकबर अवाक् रहा, फिर बोला- जन्नत की खबर कैसे मिल सकती है। तब प्यारेलाल नाई ने कहा- हुजूर अपने मंत्रीजी इतने कमाल के व्यक्ति हैं कि जन्नत तो क्या उससे भी आगे की खबर ला सकते हैं। ये तो आप हैं कि अब्बाजान को भुला ही दिया। प्यारेलाल की बात ने अकबर के मन में गुदगुदी पैदा कर दी। जैसे ही बीरबल सभा में आया तो अकबर ने बीरबल से कहा मंत्री हमारे अब्बाजान को जन्नत गये पन्द्रह वर्ष हो गया है। अभी तक कोई खैर खबर नहीं आई, आपको उनकी खैर खबर लाना है। बीरबल चक्कर में पड़ गया। जन्नत (स्वर्ग) जाने के बाद उनकी खैर खबर का प्रश्न बादशाह के दिमाग में कैसे आया, थोड़ा विचार करते ही बीरबल समझ गया, शायद यह प्यारेलाल की चाल है। बीरबल ने बिना देर किए ही कहा- ठीक है हुजूर,

जन्नत कोई बस स्टैण्ड तो है नहीं कि यूं गये और आ गये। जन्नत जाने का मतलब है दो–चार वर्ष का समय तो लगेगा ही तब तक के लिए मुझे अपने घर–परिवार की व्यवस्था बनानी पड़ेगी और इतनी लम्बी दूरी और समय में खर्चा भी बहुत बढ़ेगा।

अकबर ने कहा– इसकी कोई परवाह नहीं, आप तो अब्बाजान की खबर लेकर आइये। बीरबल ने कहा– पहले तो छः माह का समय मेरे लिए अपने परिवार की व्यवस्था के लिए चाहिए और लगभग पाँच लाख रुपया वहाँ के रास्ते के खर्च के लिए चाहिए। अकबर ने खजांची को आदेश दिया, जाओ 5 लाख रुपये का इंतजाम बीरबल के लिए किया जावे।

बीरबल खुश होकर धन राशि लेकर चल दिया घर की ओर उसने श्मशान से अपने घर तक सुरंग खुदवाई। श्मशान में नीचे से रास्ते का इंतजाम कर लिया। 6 माह पूर्ण होते ही बीरबल ने सभा में जाकर कहा– बादशाह जी अब मेरा जन्नत जाने का समय आ गया। मैं अब्बाजान की खबर लेने जा रहा हूँ। अकबर ने पूछा– कैसे जाओगे तब बीरबल ने कहा– जैसे अब्बाजान गये थे यानि जमीन में गड्ढा खोदकर दफनाया गया था। बीरबल निश्चित समय और निश्चित स्थान पर गाजे–बाजे के साथ पहुँचा। गड्ढे में लेट गया। ऊपर से कर्मचारियों ने बंद कर दिया, ऊपर से मिट्टी डाल दी। वही नीचे से उसको सुरंग के रास्ते से महल में भेज दिया गया और आनंदपूर्वक गुप्त होकर अपने गृह में रहता रहा।

लगभग साढ़े तीन वर्ष व्यतीत हो गये। प्यारेलाल मंत्री बनकर रहने लगा। वह भूल ही गया कि मंत्री कोई और था, अचानक बीरबल एक दिन छुपकर सभा के बीच में एकदम जा पहुँचा। लोग देखकर चिल्लाने लगे भागो, भूत आया, भूत आया। तब बीरबल ने अपने चेहरे पर फैले बालों को समेटते हुए कहा– नहीं भाइयो, कोई भूत नहीं, आपकी सभा का मंत्री बीरबल

जन्नत से अब्बाजान की खबर लेकर आया है, सभी उत्साहपूर्वक सुनने लगे। सारे राज्य के लोग दूर–दूर से जन्नत की सूचना सुनने के लिए दौड़े आये, तब बीरबल ने उच्च स्वर में कहा–

भाइयों, जन्नत तो जन्नत है। वहाँ पर किसी भी चीज की कोई कमी नहीं, रहने को दिव्य विमान हैं, खाने–पीने को अमृत है, पहनने को दिव्य कपड़े, घूमने को सारा लोक, क्रीड़ा करने को अप्सराएँ हैं, कहीं किसी चीज की कमी नहीं। यदि कुछ कमी है तो बस एक है, आप देखो मेरे बाल कितने बड़े हो गये और ये हाथ के नख उँगली बराबर हो गये। जब हमारी ये स्थिति है तो अब्बाजान की क्या स्थिति होगी। अब्बाजान ने हुजूर के लिए एक ही आदेश भेजा है कि अतिशीघ्र कोई होशियार सा नाई भेज दें।

अकबर ने सुनते ही कहा– बोलो, भाइयो कौनसा नाई होशियार है। तब सभी लोगों ने एक ही स्वर में आवाज दी प्यारेलाल को भेजना चाहिए। प्यारेलाल की ओर अकबर ने इशारा किया कि प्यारेलालजी शीघ्र तैयार हो जाओ, आपको जन्नत जाना है। मजबूर होकर प्यारेलाल ने कहा– कैसे जाएंगे। तब अकबर ने कहा– जैसे अब्बाजान गये थे, मंत्री गया था, वैसे ही तू जाएगा।

आखिर प्यारेलाल को गड्ढा खोदकर जीते जी गाड़ दिया और छटपटाते हुए प्राण–पखेरु उड़ गये।

आम के वृक्ष जो बोते, आम के फल उन्हें मिलते।
लगाते हैं जो कलियां गृह, वहाँ पर फूल शुभ खिलते।।
खोदते गर्त औरों को उसी में वह गिरा करते।
दीप जलाते हैं जो राहों में, वही शुभ राह पर चलते।।

***

हत्यारे से बना महात्मा

मगध देश के राजगृह नगर में वैभव सम्पन्न धन्ना सार्थवाह रहता था। उसकी पुत्री का नाम भद्रा था। उसके 5 पुत्र थे। उसके चिलाती नाम कीएक दासी थी। दासी का भी एक पुत्र था जिसका नाम अपनी माता के नाम पर चिलातीपुत्र पड़ गया था।

पाँच पुत्रों के बाद सेठ धन्ना के एक पुत्री हुई। उसका नाम सुषमा रखा गया। सुषमा को खिलाने का काम चिलातीपुत्र को सौंपा गया। चिलातीपुत्र सुषमा को खिलाते–खिलाते कभी–कभी एकांत में कुचेष्टा भी कर लिया करता था। एक दिन सेठ ने ऐसा करते उसे देख लिया तो उन्होंने उसे डांट फटकार कर घर से बाहर निकाल दिया।

आवारा घूमता हुआ चिलातीपुत्र नगर से बाहर सिंहपल्ली नामक चोरों की पल्ली में पहुँच गया। चोरपल्ली के स्वामी विजय का पुत्र मर चुका था। अतः उसने चिलातीपुत्र को अपना पुत्र मानकर रख लिया और उसे चौर्यकर्म की शिक्षा देने लगा। कुछ वर्षों में चिलतापुत्री इस विद्या में कुशल हो गया और विजय के मरने के बाद चोरों का सरदार बन गया। उसके अधीन 500 चोर थे। वह निःसंकोच होकर चोरी करता, जनता उससे भयभीत रहती, वह दुर्दान्त और क्रूर हो चुका था। लाख प्रयत्न करने पर भी राजकर्मचारी उसे पकड़ न पाये, उसका आंतक संपूर्ण राजगृह में व्याप्त हो गया था।

एक बार पल्ली के किसी आदमी ने सुषमा के रूप की प्रशंसा की। चिलातीपुत्र का सोया अनुराग जाग उठा। उसने अपने साथियों से कहा– धन्ना सेठ के यहाँ चोरी करेंगे, धन–माल तुम्हारा और अकेली सुषमा मेरी। योजना बनी और सब मिलकर धन्ना सेठ के यहाँ पहुँच गये। साथी चोरों ने

धन के गट्ठर बाँध लिए और चिलातीपुत्र ने सुषमा को उठा लिया तथा सबके सब चल दिया। इतने में सोह की नींद टूट गई। यह जानकर कि धन के साथ सुषमा को भी चिलातीपुत्र ले गया है तो उसके क्रोध का पारा न रहा। उसने अपने पाँचों पुत्रों को जगाया, कुछ राजकर्मचारी भी साथ लिये और चोरों का पीछा करने लगा। राजकर्मचारियों से उसने कह दिया– सारा धन तुम्हारा और अकेली सुषमा मेरी।

इस प्रकार उत्साह में भरकर सभी चोरों का पीछा करने लगे। धीरे–धीरे उनके और चारों के बीच की दूरी कम होने लगी। अनन्तः चोर साफ दिखाई देने लगे। सेठ और आरक्षी दल को देखकर चोर घबरा गये। वे दन की पोटें छोड़कर इधर–उधर भाग खड़े हुए। आरक्षियों ने धन की पोटें उठा लीं। इस स्थिति को देखकर चिलातीपुत्र बहुत निराश हुआ। उसे अपने साथियों पर क्रोध भी बहुत आया; पर वह इस समय कर ही क्या सकता था? सुषमा को कंधे पर लादे भागता ही रहा।

इधर कर्मचारियों की इच्छा पूरी हो चुकी थी, धन उन्हें मिल चुका था। अब उन्हें भी चिलातीपुत्र को पकड़ने और सुषमा को उसके चंगुल से मुक्त कराने का कोई उत्साह न रहा। सेठ ने उन्हें बहुत प्रेरणा दी, कर्त्तव्य की याद दिलाई पर वे आगे न बढ़े। निराश सेठ अपने पाँचों पुत्रों सहित ही चिलातीपुत्र का पीछा करने लगा। चिलातीपुत्र भागते–भागते थक चुका था। सुषमा का बोझ अब उसे भारी लगने लगा। जब उसने देखा कि सेठ और पुत्र बहुत समीप आ गये हैं और इनकी पकड़ से बचना अत्यन्त कठिन है तो अपना बोझ कम करने के लिए उसने सुषमा का सिर धड़ से अलग कर दिया। धड़ को वहीं पड़ा छोड़ दिया और एक हाथ में सुषमा का सिर तथा दूसरे हाथ में

नंगी तलवार लिए भाग छूटा।

जब सेठ और उसके पुत्रों ने सुषमा का धड़ देखा तो उन्हें घोर दुःख हुआ। उनके उद्देश्य भग्न हो चुका था। जिस सुषमा के लिए इतना प्रयत्न किया, जब वह ही नहीं रकही तो चिलातीपुत्र का पीछा करने से अब क्या लाभ था? वे घोर निराशा में डूब गये। आगे बढ़ने से उनके पांवों ने जवाब दे दिया। सबके सब वहीं एक वृक्ष के नीचे बैठ गये और घर लौटने का विचार करने लगे।

इधर भागते–भागते चिलातीपुत्र भी बहुत थक गया था। चलते–चलते उसके मन में अनेक प्रकार के विचार आने लगे। यह भी कोई जीवन है? हर वक्त भागना, आठों पहर का भय, एक क्षण शांति नहीं, मानसिक कष्ट और पीड़ा ही में जीवन गुजर रहा है। जो दूसरों को दुःख देता है, उसे भी बदले में दुःख मिलता है। मेरा यह चौर्य कर्म निंदनीय है, हर समय चित्त में उद्विग्रता और अशांति रहती है।

इन्हीं विचारों में खोया वह आगे बढ़ता जा रहा था। एकाएक उसकी दृष्टि एक मुनि पर पड़ी। मुनिश्री उस बीहड़ और भयानक जंगल में एक वृक्ष के नीचे ध्यानस्थ खड़े थे। उनके मुख–मंडल पर अनुपम शांति और अद्भुत तप, तेज दमक रहा था।

चिलातीपुत्र ने मुनि को देखकर मन ही मन विचार किया कि जीवन तो इन्हीं का है, कितनी शांति है। इनसे शांति पाने का उपाय जानना चाहिये। वह मुनिश्री के पास आया और उनसे शांति पाने का उपाय पूछा– मुनिश्री ने उसे देखा तो जान लिया कि पापकर्म में इस समय लिप्त होते हुए भी इस पुरुष में भव्य आत्मा का निवास है। उन्होंने संक्षेप में कहा– उपशम, विवेक और संवर को स्वीकार करो। इससे तुम्हें शांति प्राप्त होगी।

चिलातीपुत्र एकांत में जाकर बैठ गया और मुनिश्री द्वारा बताये गये उपशम, विवेक, संवर इन तीनों पदों पर चिंतन करने लगा। चिंतन की धारा में बहते हुए उसने समझ लिया कि उपशम का अभिप्राय क्रोध की अग्नि शांत करना है, विवेक का अर्थ परिग्रह और परवस्तुओं का त्याग है तथा संवर का आशय मन और इन्द्रियों का निग्रह करना है। इन्हीं तीनों से आत्मा को श्रावित करना चाहिए, यही शांति का राजमार्ग है।

बस, वह इन तीनों पदों के चिंतन में डूब गया। उसके पास ही रक्तरंजित तलवार और सुषमा का कटा सिर पड़ा था।

रक्त की गंध से वज्रमुखी चीटियाँ आकर्षित हो गई। उसके शरीर पर चींटी चढ़ने लगी, उसे नोंचने लगी। उन चींटियों ने उसके शरीर को छलनी कर दिया; लेकिन उसने इन पर क्रोध नहीं किया अपितु उपशम, विवेक और संवर के चिंतन में ही डूबा रहा। अंत में समतापूर्वक प्राण त्याग कर वह देवलोक प्राप्त हुआ।

***

वर्तमान का आचरण भविष्य का निर्माता

एक राजा था। उसके मन में हमेशा कुछ शब्द गूँजा करते थे। उसने अपने मन को बहुत समझाया; लेकिन वह कुछ समझ नहीं सका। यह कचोट उसे सताती ही रहती थी। उसने अपने मंत्रियों, अधिकारियों तथा विद्वानों से समाधान किया; लेकिन कुछ हाथ नहीं लगा। अंत में वह अपने नगर से बाहर कुटिया में रहने वाले संत के पास पहुँचा। संत उस समय अपनी कुटिया के सामने लगे हुये बगीचे में पानी दे रहा था तथा खिलते हुये पुष्पों को देखकर

मुस्करा रहा था। राजा ने साधु के पास पहुँचकर अपनी शंका रखी कि हे संत ! महोदय मेरे मन में रह–रहकर ये तीन बातें उभरा करती है उसका तात्पर्य क्या है? तीन बातें ये हैं महत्त्वपूर्ण संयम, महत्त्वपूर्ण कार्य, महत्त्वपूर्ण व्यक्ति।

राजा के सारे शब्द सुनकर भी उस संत ने कोई उत्तर भी नहीं दिया। राजा ने सोचा– मैंने उसे अभिवादन नहीं किया है इसलिये यह सब कुछ बोल नहीं रहा है। राजा ने संत को प्रणाम किया; लेकिन वह फिर भी अपनी पुष्प क्यारियों में पानी देता रहा और पुष्पों को देखकर मुस्कराता रहा। राजा ने पुनः विचार किया कि यह परिश्रम करके थक गया है। जब विश्राम कर लेगा तब मेरा उत्तर देगा। अतः राजा ने संत के हाथ से पानी का बर्तन ले लिया और स्वयं पानी देने लगा। संत विश्राम करने के लिये लेट गया। इतने में देखा वहाँ एक व्यक्ति दौड़ता–दौड़ता आ रहा है जो बहुत बुरी तरह से घायल था। जगह–जगह उसके शरीर से रक्त टपक रहा था। वह व्यक्ति साधु की कुटिया तक आते–आते मूर्छित हो गया। साधु और राजा दौड़कर उस व्यक्ति के पास गये। जल लेकर घाव धोये, राजा ने अपनी पगड़ी में से कपड़ा फाड़कर घावों पर पट्टी बाँध दी। जब उसे कुछ आराम मिला तब उसकी मूर्छा टूटी। संत के साथ–साथ राजा को भी अपनी परिचर्या करते देख उसकी आँखों से गंगा–जमुना की तरह आँसू बह निकले। घायल व्यक्ति ने पैर पकड़ लिये और रोता हुआ बोला– राजन् ! मुझे माफ कर दो। मैं बहुत पापी हूँ, मेरा अपराध क्षमा कर दो महाराज।

आश्चर्यजनक राजा ने कहा– भाई मैं तो तुम्हें जानता भी नहीं हूँ कि तुम कौन हो और तुम्हारा अपराध क्या है? यदि तुमने मुझे अपना माना ही है तो तुम सारी बातें साफ–साफ कहो। व्यक्ति ने साहस बटोरकर कहा–

महाराज, मैं पुरी से आया हूँ, मेरा भाई युद्ध में आपके हाथों मारा गया था। उसका बदला लेने के लिये मैं घूम रहा था। आज आपको इधर आते देखकर मैं भी आपके पीछे–पीछे चला आया; लेकिन आपके सामंतों ने मुझे देख लिया और मेरी यह दशा कर दी। प्रभो ! मुझे पता नहीं था कि आप इतने दयालु है कि अपनी पगड़ी फाड़कर मेरी सेवा कर सकते हैं।

राजा साहब ! आपकी सेवा ने मेरा दिल आज बिल्कुल बदल दिया है। अब मैं हमेशा ही आपकी सेवा में रहूँगा। राजा ने उसे अभयदान दिया और सुरक्षाकर्मियों के साथ उसे अपने स्थान पर भेज दिया।

अब पुनः राजा ने संत के सामने अपनी समस्या रखी। संत ने कहा– राजन् ! अब तो आपको अपने प्रश्नों का उत्तर मिल गया ही होगा। सबसे महत्त्वपूर्ण समय तो वह था जब तुम क्यारियों में पानी देने लगे थे। यदि उस समय वापस चले जाते तो तुम्हें यह मार गिराता। सबसे महत्त्वपूर्ण काम था उसकी सेवा। यदि सेवा करके उसको बचा नहीं पाते तो वह शत्रुता लेकर के मरता और फिर न जाने क्या–क्या उपद्रव करता। अब सबसे महत्त्वपूर्ण मैं हूँ जिसके पास आप बैठे हैं।

निष्कर्षहहह महत्त्वपूर्ण समय है वर्तमान का, जिसका उत्तम उपयोग करो; क्योंकि वर्तमान का आचरण भी भविष्य का निर्माता है। महत्त्वपूर्ण कार्य वह है जो तुम्हारे सामने ही उसे तल्लीनता से करो। महत्त्वपूर्ण व्यक्ति वह है जो तुम्हारे सामने है उसके साथ बहुत ही आत्मीयता से व्यवहार करो।

❋❋❋

सच्चा साथी

किसी गहन जंगल से एक युवती जा रही थी। उसने देखा कि एक हृष्ट–पुष्ट नौजवान सुन्दर राजकुमार पृथ्वी माता की गोद में पड़ा हुआ है। उसे देखकर उसके मन में विचार आया कि ऐसे निर्जन वन में यह अचेत क्यों पड़ा है?

वह कौतुहल से उसके पास गई। जैसे ही उसने देखा कि इस राजकुमार का शरीर बाणों से बिंधा पड़ा है तो उसके कण्ठ से अनायास एक 'चीख' निकल गई। दूसरे ही क्षण वह 'चीख' करुणा में पलट गई।

युवती ने सोचा– कैसा क्रूर है वह मानव जो अपने साथी मानव को छेद और भेद डालता है। क्या यह वेदना वह स्वयं सहन कर सकता है? यदि नहीं तो फिर वह क्यों दूसरों को पीड़ा देता है?

युवती यह सोचती हुई कुमार की ओर झुकी और एक–एक करके उसके शरीर से बाण निकालने लगी। दया से उसका हृदय पसीज गया था। वह बार–बार कहती– ''मानव कैसा क्रूर है जो अपने ही भाई को मारता है।'' और बाण खींच लेती। इस प्रकार उसने 147बाण उसके शरीर से खींच लिये। अब केवल एक बाण खींचना शेष था। युवती ने वह 148वाँ बाण भी खींच लिया और वह चकित हुई। जब कुमार ने नेत्र खोले दिये तथा प्रसन्न बदन वह उठ खड़ा हुआ। दोनों ही अमर प्रेम में बंध गये और सदा के लिये सुखी हो गये।

दूर वृक्ष पर बैठा हुआ एक गृहस्थ यह दृश्य देखकर भौचक्का रह गया। वह वृक्ष से उतरा और आगे बढ़ा। मार्ग में उसने एक मुनिराज के दर्शन

किये। वह उनके पास बैठ गया और सब वर्णन सुनाकर बोला– महात्मन् ! मैंने एक राजकुमार को देखा जो बहुत दिनों का अचेत पड़ा था, पर उस युवती ने जिला दिया। नाथ ! वह जीवित कैसे हो गया? मुनिराज ने उत्तर दिया– ''दया में बड़ी शक्ति है। दया वह अमृत है जिसका पान कर मानव अमर हो जाता है।''

इसी समय दिव्य रूप का एक सुन्दर पुरुष वहाँ आया। उसने मुनिराज की वन्दना की और गृहस्थ को लक्ष्य कर पूछा– मुझे पहिचाना? किन्तु गृहस्थ संशय में पड़ गया– वह अपनी आँखों पर विश्वास नहीं कर पा रहा था।

आगन्तुक बोला– ''तुम्हें विश्वास नहीं हो रहा है कि मैं तुम्हारा मित्र हूँ; क्योंकि मैं तो गत चोला बहुत दिनों पहले ही छोड़ चुका था।''

मुनिराज बीच में ही बोल उठे– वत्स ! चोला छोड़ने से तो जीव नहीं मरता, वह तो अमर है। दिव्य पुरुष बोला– ''महाराज, इस सत्य की प्रतीति अपने मित्र को कराना ही तो मुझे इष्ट है। इन्हें आत्मा के अमर जीवन में शंका थी।''

देखो मेरे मित्र ! मैं चोला छोड़कर भी तेरे सम्मुख हूँ। गृहस्थ आश्चर्य से बोला– ''यह तो ठीक है, पर तुम्हारा चोला तो चिता में भस्म हो गया था।'' दिव्य पुरुष बोला– ''तो क्या हुआ, चोला तो चाहे जहाँ से ले लो, वह पंचभूत का जो बना है।'' गृहस्थ सोच में पड़ गया। दिव्य पुरुष ने कहा– चिंता मत करो, मैं मरकर देव हुआ और तुम्हें सम्बोधने (कल्याण मार्ग बतलाने) आया हूँ। गृहस्थ यह सुनकर प्रसन्न हुआ।

मुनिराज का माथा ठनका और उन्होंने दिव्य पुरुष को लक्ष्य कर कहा– ''देव ! तो क्या तुम्हीं ने मृतकुमार को जिलाने का दृश्य उपस्थित किया था।? जिसको कि देखकर गृहस्थ चकित है।''

देव ने मस्तक नमाकर कहा– ''हाँ नाथ ! मैंने ही इनको सम्बोधने के लिए वह दृश्य उपस्थित किया था। यह बहुत कहा करते थे। 'कर्म लिखी मिटी न मिटाये' पर इसका रहस्य न समझए।''

उसने कहा– ''गुरुवर्य बता दें।''

गुरु ने कहा– ''तो सुन, वह संसार वन है। इस संसार–वन में अमर और सदा यौवन का भोक्ता आत्मा 148 कर्म बाणों से भिदा हुआ अचेत पड़ा है। स्वयंवेदन चेतना सुन्दरी जब उसे देखती है तो दयाभाव से ओतप्रोत हो एक–एक करके कभी कर्म बाणों को आत्मा में से निकाल कर फेंक देती है। उस समय आत्मा अपने स्वरूप में जीवित होकर चिरकाल लिए स्वानुभूति के साथ रमण करता है।''

क्यों भाई देव ! उक्त दृश्य को प्रकट करने में तुम्हारा यही भाव था न?

देव ने कहा– हाँ प्रभु !

मुनिराज ने उनको आशीर्वाद दिया। गृहस्थ ने अपने मित्र को कंठ से लगा लिया और कहा– तुमने मेरी दृष्टि निर्मल कर दी। तुम धन्य हो।

संसार में दया धर्म ही मुख्य है। मित्र वही है जो सच्ची ज्ञान दृष्टि दे। दोनों ने गुरु को नमस्कार कर आशीर्वाद प्राप्त किया और अपने–अपने मार्ग गए।

***

महान् कौन

काशी का राजा ब्रह्मदत्त बड़ा ही प्रतापी था, कोई भी अपराध उसके

राज्य में नहीं होता था। सारी प्रजा हर तरह से सुखी थी। एक दिन राजा ने अपने सभासदों से पूछा कोई भी कमी मेरे अन्दर आप देखते हों तो बतलाइये। किसी सभासद को कोई कमी राजा में नजर नहीं आई। सभी ने रह रहकर उसकी प्रशंसा की। राजा को इससे संतोष न हुआ, उसने समझा सभासद उनके भय से सत्य को छुपा रहे हैं, इसलिये वह एक रात अपने रथ पर सवार होकर चुपचाप अपने में कमी खोजने के लिये राज्य की सीमाओं से बाहर निकल गया। रास्ते में उसकी भेंट कौशल के राजा से हुई। वह भी अपने में कमी खोजता हुआ इधर–उधर घूम रहा था। जब दोनों के रथ एक दूसरे के सामने आ गये तो दोनों के सारथी ने एक दूसरे से रास्ता माँगा।काशी के सारथी ने अपने राजा की वीरता का वर्णन किया। कौशल का राजा भी बराबर का वीर था, तब काशी के सारथी ने अपने राजा के धन का बखान किया। कौशल का राजा भी उतना ही धनी था, अन्त में यह तय हुआ कि राजा उम्र में छोटा हो उसी का रथ दूसरे के रथ को रास्ता दे दे। छान–बीन करने पर पता चला कि दोनों राजाओं का जन्म एक ही दिन एक ही समय में हुआ था। ऐसे भी बात जब न बनी तो कौशल के सारथी ने कहा– ''मेरे राजा भले को भलाई से, बुरे को बुराई से, अच्छे को अच्छाई से और कठोर को सख्ती से जीतने वाले हैं, इसलिये हे काशी के सारथी ! मुझे रास्ता दो। काशी के सारथी ने उत्तर दिया।'' ''मेरे राजा गुस्से को प्यार से, बुराई को अच्छाई से, झूठ को सच्चाई से और कंजूसी को दान से जीतने वाले हैं इसलिए हे कौशल के सारथी मुझे रास्ता दो।'' इतना सुनते ही कौशल के सारथी ने रथ एक ओर हटा लिया, काशी के राजा ने कौशल के राजा को आशीर्वाद और अपनी राजधानी में आने का निमंत्रम देकर हमेशा के लिये मित्रता के बन्धन में बाँध लिया। सचमुच में महान् वही है जो बुराई के बदले में

भी भलाई ही करता है।

***

पापी का अन्न

महाभारत युद्ध में कौरव–सेनापति भीष्म पितामाह जब अर्जुन के बाणों से घायल होकर रणभूमि में गिर पड़े तो कुरुक्षेत्र में हा–हाकार मच गया। कौरव पाण्डव पारस्परिक वैरभाव को भूलकर गाय की तरह डकारते हुए उनके समीप पहुँचे। भीष्म पितामह की मृत्यु यद्यपि पाण्डव पक्ष की विजय–सूचक थी, फिर भी थे तो वे पितामह न? धर्मराज युधिष्ठिर बालकों की भाँति फुफ्फा मार कर रोने लगे। अन्त में धैर्यपूर्वक रुंध हुए कण्ठ से बोले–

''पितामह ! हम ईष्यालु, दुर्बुद्धि पुत्रों को, इस अन्तसमय में जीवन में उतारा हुआ कुछ ऐसा उपदेश देते जाइए, जिससे हम मनुष्य जीवन की सार्थकता प्राप्त कर सकें।''

धर्मराज का वाक्य पूरा होने पर अभी पितामह के ओष्ठ पूरी तरह हिल भी न पाये थे कि द्रौपदी के मुख पर एक हास्य रेखा देख सभी विचलित हो उठे। कौरवों ने रोष भरे नेत्रों से द्रौपदी को देखा एवं पाण्डवों ने इस अपमान और ग्लानि को अनुभव करते हुए सोचाहृह

''हमारे सिर पर उल्कापात हुआ है और द्रौपदी को हास्य सूझा है।''

पितामह को कौरव–पाण्डवों की मनोव्यथा और द्रौपदी के हास्य को भाँपने में विलम्ब न लगा। वे मधुर स्वर में बोलेहृह

''बेटी द्रौपदी ! तेरे हास्य का मर्म मैं जानता हूँ। तूने सोचा– जब भरे

दरबार में दुर्योधन ने साड़ी खींची तब उपदेश देते न बना, वनों में पशु–तुल्य जीवन व्यतीत करने को मजबूत किया तब सान्त्वना का एक शब्द भी मुँह से न किला, कीचक द्वारा लात मारे जाने के समाचार भी साम्यभाव से सुन लिये, रहने योग्य स्थान और क्षुधा–निवृत्ति को भोजन माँगने पर जब कौरवों ने हमें दुत्कार दिया तब उपदेश याद न आया। सत्य और अधिकार की रक्षा के लिए पाण्डव युद्ध करने को विवश हुए तो सहयोग देना तो दूर, उल्टा कौरवों के सेनापति बनकर हमारे रक्त के प्यासे हो उठे और जब पाण्डवों द्वारा मार खाकर जमीन सूंघ रहे हैं, मृत्यु की घड़ियाँ गिर रहे हैं तब हमीं को उपदेश देने की लालचा बलवती हो रही है। बेटी ! तेरा यह सोचना सत्य है। तू मुझ पर जितना हँसे कम है। परन्तु पुत्रों ! उस समय मुझमें उपदेश देने की क्षमता नहीं थी, पापात्मा कौरवों का अन्न खाकर मेरी आत्मा मलीन हो गई थी। दूषित रक्त नाड़ियों में बहने से बुद्धि भ्रष्ट हो गई थी किन्तु अब वह सब अपवित्र खून अर्जुन के बाणों ने निकाल दिया है। अतः आज मुझे सन्मार्ग बताने का साहस हो सकता है।

***

कल दूँगा

महाराज युधिष्ठिर के पास किसी याचक ने आकर कुछ माँगा। युधिष्ठिरजी को वह मनुष्य अच्छा दिखलाई पड़ा। अतएव उपर्युक्त पात्र समझकर कहा– कल दूँगा। जब दान के लिये युधिष्ठिरजी ने कल का वादा किया तो भीम ने सोचा कि 'बड़े भैया दान की महिमा भूल गये हैं।' मैं कुछ कहूँगा तो बुरा लेगा, लेकिन मुझे अपने बड़े भाई का हित करना है तो मैं क्या करूँ? ऐसा विचार करके चौक में रखे नगाड़े को बजाने लगा।

धर्मराज ने पुछवाया– यह नगाड़ा क्यों बज रहा है? भीम ने कहा– 'भैया ने काल को जीत लिया है', इसी खुशी में। क्योंकि उन्होंने एक याचक को कल दान देने का वादा किया है। अतएव कल तक के लिए तो उन्होंने काल को अपने आधीन कर लिया है। इस बात को सुनकर युधिष्ठिर लज्जित हुए। ''मैंने यह भूल की है, जो सुपात्र को तुरन्त दान नहीं दिया। कल का क्या भरोसा? अच्छे कार्यों को कल के ऊपर कभी नहीं छोड़ना चाहिए।'' ऐसा विचार कर उस पात्र को दान देने के लिए बुलवाया। सेवक उसे ढूँढ़कर लाये और युधिष्ठिरजी ने सम्मानपूर्वक दान दिया।

***

सब बासी खाते हैं

बहुत पुराने समय की बात हैह्नह्न धनराज सेठ के यहाँ श्री अभयनन्दी मुनिराज का निर्विघ्न आहार हुआ। आहार के बाद सेठ के प्रार्थना करने पर मुनिराज चौकी पर बैठ गये। सेठ की पुत्रवधू ने हाथ जोड़कर महाराज ने सविनय प्रश्न कियाह्नह्न महाराज इतने सवेरे–सवेरे कैसे? मुनिराज ने विद्वतापूर्ण प्रश्न के अभिप्राय को समझकर उत्तर दिया– समय की खबर ही नहीं थी। फिर मुनिराज ने प्रश्न किया– बेटी ! तेरी आयु कितनी है? उत्तर मिला– 'तीन वर्ष'। 'तेरे पति की आयु कितनी है?' उसने उत्तर दिया– 'छह माह की।' इसके बाद मुनिराज ने फिर प्रश्न किया– 'बेटी ! और तेरे स्वसुर की आयु क्या है?' उत्तर मिला– 'वे तो अभी पैदा ही नहीं हुए।' 'बेटी, ये सब ताजा खा रहे हैं या बासी ?' उत्तर मिला– 'अभी तक तो बासी ही खा रहे हैं।' इतनी चर्चा के बाद मुनिराज अभयनंदी जंगल की ओर चले

गये। यहाँ धनराज सेठ अपनी पुत्रवधू के विचित्र उत्तर सुनकर तथा उनसे अपना अपमान समझ कर पुत्रवधू से बोला– अरी मूर्खा ! तूने तो मुनिराज के समक्ष मेरे परिवार की नाक काट ली। तूने आज पागलपन में इस परिवार का अपमान करने के लिये सारे उत्तर मूर्खपन के दिये हैं, अतः तू इसी समय मेरे घर से निकल जा। पुत्रवधू ने कहा– पिताजी ! मैंने सारी बातें सच और सन्मानसूचक कही हैं। आपको विश्वास न हो तो मुनिराज से पूछकर ही निर्णय कर लीजिये। तब सेठ ने मुनिराज के पास जकर इन सब गूढ़ बातों का मतलब पूछा– मुनिराज ने कहा– सेठजी ! तुम्हारी पुत्रवधू तो बड़ी बुद्धिमान है। उसने पूछा था– महाराज, सवेरे–सवेरे कैसे अर्थात् आपने इस छोटी सी उम्र में मुनिव्रत क्यों ले लिया? जिसका मैंने उत्तर दिया था कि समय की खबर नहीं। अर्थात् किस उम्र में काल उठा ले जावे इसका किसे पता? तथा मैंने आयु पूछी थी उसका मतलब है किसको कब से धर्म की रुचि प्राप्त हुई है। उत्तर में तुम्हारी पुत्रवधू ने कहा था कि मुझे तीन वर्ष से धर्म का सच्चा श्रद्धान हुआ है और ससुरजी...

मंदबुद्धि का उपहास

एक नगर में एक व्यक्ति रहता था। उसके पास धन–दौलत तो काफी था; किन्तु धार्मिक कार्यों में कम खर्च करता था। इसलिए वह मरकर एक सेठ के गृह उत्पन्न हुआ। बच्चा देखने में बहुत अच्छा, सुन्दर था किन्तु उसकी बुद्धि मंद थी। सेठजी ने सोचा– मेरे पास रहकर तो बिगड़ जाएगा, इसे पढ़ने के लिए बाहर भेजना चाहिए। ऐसा विचार कर सेठ ने उसे आश्रम में पढ़ने के लिए भेज दिया। समय व्यतीत हो रहा था। बच्चा पढ़ने–लिखने में तो कम दिमाग रखता था; किन्तु खेलने–कूदने में अव्वल नंबर था।

यद्यपि गुरुजी मास्टर साहब के साथ वैद्य भी थे। बच्चे ने एक दिन काफी शैतानी की तो गुरुजी ने बच्चे को काफी डाँटा। बच्चे ने गलती स्वीकार कर ली। गुरुजी ने रहम करके माफ कर दिया। गुरुजी बोले– अच्छा तू पढ़ाई तो करता नहीं है इसलिए कल से हमारे साथ बैग लेकर चलना, वह तैयार हो गया।

एक बार गाँव में किसी महिला की तबियत खराब हो गई तो उसके परिवार वालों ने विचार किया कि यहाँ पर जो वैद्यजी है उनको दिखाना चाहिए। वैद्यजी को लेकर वह घर आया। वैद्यजी ने महिला का हाथ देखा और कहा कि इन्हें बुखार आ रहा है और अपथ्य का सेवन किया है। वैद्यजी ने दवाई दी और गंतव्य स्थान की ओर रवाना हो गये। रास्ते में बच्चे ने वैद्यजी से पूछा– आपने कैसे जाना कि महिला को बुखार आ गया है और अपथ्य का सेवन किया है। वैद्यजी ने कहा– सीधी सी बात है, हाथ देखा तो नाडी से जाना और हाथ गरम था इसलिए बुखार है। बच्चे ने फिर पूछा कि अपथ्य का सेवन किया, यह कैसे जाना? तब उत्तर मिला कि पलंग के नीचे मूली के पत्ते रखे थे इसलिए अपथ्य का सेवन किया था। बच्चे ने सोचा– यह अच्छा काम है, कुछ करना नहीं पड़ता है। इसलिए वैद्यगिरी सीखना चाहिये।

समय अपनी गति से व्यतीत हो रहा था। एक दिन वैद्यजी को किसी संबंधी के घर विवाह में जाना पड़ा। अचानक नगर के बुजुर्ग दादाजी की तबियत खराब हो गई। दादाजी का बेटा वैद्यजी को लेने गया; किन्तु वैद्यजी पाँच दिन के लिए घर से बाहर गये हुए थे। बेटे ने बच्चे से कहा– तुम्हें देखना आता हो तो चलकर देख लीजिए। बच्चे ने हाथ देखा और कहा– इन्हें बुखार आ रहा है और अपथ्य का सेवन किया है। बेटे ने पूछा– क्या अपथ्य

का सेवन किया है, उसने तुरन्त पलंग के नीचे झाँककर देखा तो वहाँ मरा चूहा पड़ा था तो उसने कहा– इन्होंने चूहे को खाया है। बेटे ने इस प्रकार सुना तो उसका माथा गरम हो गया 4–5 चांटे लगाकर रफू–चक्कर कर दिया।

फिर कुछ समय बाद एक घटना घटी कि वेल्डिंग का कार्य करने वाले की आँखों में दर्द था। उसके पिताजी उसे लेकर वैद्यजी के पास पहुँचे। वैद्यजी को दिखाया तो वैद्यजी ने गर्म पानी में नमक डालकर सिकाई करने के लिए कहा। पिताजी के सामने 2–4 बार प्रयोग करके भी दिखा दिया ताकी आगे परेशानी न हो। एक दिन वैद्यजी को किसी काम से बाहर जाना था। एक बच्चे की आँखों में दर्द था तो उसने वैद्यजी की नकल करके कहा– उबलते पानी में नमक डालकर सिकाई कर दीजिए और उसने प्रयोग स्वरूप उसकी आँखों में गरम पानी डाल दिया इससे उसकी आँखें फूट गईं। अब तो वैद्यजी के पास दिन–प्रतिदिन शिकायत आने लगी तो वैद्यजी ने निश्चय किया कि इसे अब घर में नहीं रखना है।

वैद्यजी उसे घर छोड़ने किसी कारणवश नहीं जा सके तो एक घटना और घटी। एक किसान के घर ऊँट पला था, अचानक वह बीमार पड़ गया। किसान ने वैद्य को बुलाकर दिखाया, देखा गले में कुछ अटक रहा है। वैद्य ने पूछा– इसने कितने दिन से खाना–पीना नहीं खाया। किसान ने कहा– दो दिन से नहीं खाया। पुनः पूछा– चरने के लिए कहाँ गया था तो उत्तर मिला कि नदी किनारे तो वैद्यजी ने अनुमान लगाया कि नदी किनारे तरबूज के फल लगे हैं निश्चित रूप से इसने तरबूज खाया है। वैद्यजी ने एक रस्सी से ऊँट को बाँधकर नीचे गिराने को कहा और एक पत्थर से धीरे से गले में मारा तो

तरबूज फूट गया और आराम से नीचे चला गया। ऊँट को भोजन देते ही खाने लगा। सभी लोग खुश हुए। वैद्यजी की ऐसी करतूत पर कि इन्होंने ऊँट को ठीक कर दिया।

एक दिन एक बुढ़िया के गले में दर्द हो रहा था। वैद्यजी घर में नहीं थे सो उस बुद्धू बच्चे को बुढ़िया के घर बुलाया। बच्चे ने बुढ़िया से लेटने को कहा– बुढ़िया लेट गई। दो पत्थर मँगाये। एक पत्थर गले के नीचे और दूसरा पत्थर ऊपर से मार दिया तो बुढ़िया का राम नाम सत्य हो गया। अब तो वैद्यजी घर से उसे साथ लेकर छोड़ने चल देते हैं। रास्ते में एक नदी पड़ी। वैद्यजी ने सोचा– यहाँ नहा–धोकर पाठ कर लें। वैद्यजी ने बच्चे से कहा– पाठ वाला गुटका कहाँ है? उसने कहा वह तो गिर गया। उसे तुरन्त भेजकर कहा– चलो गुटखा लेकर आओ और कहा कि जब कभी कुछ गिर जाय तो उठा लिया करो। आगे चलकर घोड़े ने पोट्टी कर दी तो उसे उठाकर वह वैद्यजी के पास पहुँचकर कहता है– यह घोड़े में से गिर गया है। वैद्यजी ने उसे डाँटा और मैंने उपयोगी वस्तु उठाने के लिए कहा था, तूने तो लीद उठा ली। अब बच्चे को गुस्सा आया और गुस्से में आकर कहता है– उस समय नहीं उठाया था तो डाँट पड़ी और आज उठा लिया तब भी डाँट पड़ी। अब आप मुझे लिखवा दीजिये,क्या–क्या वस्तु गिर जाय तो उठाना है? वैद्यजी ने एक लिस्ट में बहुत सारी वस्तुओं के नाम लिखवा दिए। जैसे– पेन, कागज, कपड़ा आदि। वैद्यजी आगे की ओर रवाना हुए। अचानक एक जानवर आया तो घोड़ा चमक गया जिससे वैद्यजी गड्ढे में गिर गये। उसने तुरन्त लिस्ट निकालकर देखा कि इसमें लिखा है क्या? उसने देखा कि इसमें कहीं नहीं लिखा है कि वैद्यजी गिर जाए तो उठा लेना और वह आगे की ओर रवाना हो जाता है। घोड़ा लेकर वह एक चबूतरे पर सो रहा है। गाँव

विशद मूक उपदेश

वालों को वैद्यजी के कराहने की आवाज आई तो देखा कि वैद्यजी गड्ढे में पड़े हैं। खैर–खबर पूछने पर पता चला कि यह उस बच्चे का कमाल है। लोगों ने उसे पकड़कर अच्छी पिटाई की। इस प्रकार बालक को अनेक प्रकार के कष्ट भोगना पड़े।

कहने का तात्पर्य है कि जो धार्मिक भावना से दूर रहते हैं उनकी बुद्धि उस बुद्धू के जैसी हीन होती है।

***

16. लालची पति

एक सेठजी के पास अपार धन था। सेठजी ने तृष्णावश सेठानी से परदेश में जाकर और धन कमाने का विचार देखा। सेठानी जिनधर्मी एवं संतोषी थी। उसने सेठजी को बहुत समझाया कि हमारे घर में किसी भी वस्तु की कमी नहीं है। आप और धन कमाने के लिए परदेश क्यों जाते हो? किन्तु लोभी सेठ नहीं माना तब सेठानी ने सेठजी से कहा कि तुम परदेश जा रहे हो तो ठीक है मुझे एक वीणा ला दो जिससे मैं आपके पीछे अरहंत भगवान की भक्ति में अपना समय व्यतीत करूँगी। सेठजी ने उसे एक वीणा लाकर दे दी और स्वयं धन कमाने की लालसा में परदेश चला गया।

सेठजी ने परदेश में बारह वर्ष तक अपार धन कमाया और जब वापस घर चलने लगा तो ये सोचकर कि इतना धन कैसे ले जाऊँगा, रास्ते में लुटने का भी डर है तो उसने उस धन के स्थान पर एक लाल (रत्न) खरीद लिया और फकीर के भेष में रत्न लेकर अपने देश को रवाना हो गया। अपने घर पहुँचकर सेठ ने एक गुदड़ी से लाल (रत्न) निकाला और सेठानी को दिखाते हुए खुशी से झूमने लगा।

सेठानी ने देखा कि सेठजी एक लाल पा जाने से बहुत प्रसन्न हो रहे हैं तो उसने सेठजी से कहा कि तुम एक लाल के पीछे इतने मचल रहे हो, गर्दन

अकड़ा रहे हो। ऐसे लाल तो मैंने आपके पीछे एक कोठे में भर रखे हैं। सेठ ने कोठा लालों से भरा देखा तो एकदम हतप्रभ रह गया और कहने लगा कि जरूर मेरे पीछे तेरे किसी राजा से अनैतिक सम्बन्ध हो गए होंगे जिससे उसने तुझ पर ये लाल वारे (लुटाए) हैं।

सेठानी ने कहा कि जब मैं भगवान की भक्ति से वीणा बजाती थी तो एक हिरण वीणा की धुन पर मुग्ध होकर वीणा का संगीत चलने तक भगवान की भक्ति में लीन हो जाता और जाते समय मुँह से एक लाल उगल कर जाता था। सेठजी ने कहा कि कल मुझे यह सब दिखाना।

अगले दिन पुनः सेठानी ने वीणा बजाई और वही हिरण आया तथा वीणा के संगीत की समाप्ति पर एक लाल उगल दिया। ऐसा देखकर सेठ ने अति लोभ में आकर हिरण को घेर लिया और धनुष बाण उस पर चला दिया, यह सोचकर कि इसे मारकर इसके पेट में भरे लाल निकाल लूँगा। बाण के लगते ही हिरण धराशायी हो गया। यह देखकर करुणा से भरी सेठानी उससे लिपटकर रोने लगी। हिरण अभी मूर्छित नहीं हुआ था। वह बोला– सेठानी जी, जब तक मेरी सांस है। मुझे जिनेन्द्र भक्ति की वीणा सुनाते रहो। सेठानी ने ऐसा ही किया और कुछ समय पश्चात् अरहंत भक्ति में लीन हिरण ने अपने प्राण छोड़ दिये। हिरण को मृत देखकर सेठ लालों को पाने की लालच से तुरन्त उसका पेट फाड़ने हेतु चाकू ले आया। यह देखकर सेठानी हिरण के मृत शरीर से लिपट गई और कहा कि सेठजी बहुत हो चुका, अब मैं इसका पेट नहीं चीरने दूँगी। यदि ऐसा ही करना है तो पहले मेरी गर्दन काटनी होगी।

सेठ ने अनंतानुबंधी लोभ के वशीभूत होकर अत्यन्त क्रोध से सेठानी की गर्दन चीर दी और फिर हिरण का पेट चीर डाला। पेट चीरने पर सेठ को मांस और खून के अतिरिक्त कुछ नहीं मिला। सेठ अनभिज्ञ था, अज्ञानी था। उसे क्या पता था कि ये लाल हिरण के पेट से नहीं, ये तो

अरिहंत भगवान की भक्ति के फल से उगलता था।

लोभी सेठ मृत सेठानी व हिरण को छोड़कर कोठे में लाल बटोरने गया तो कोठा खोलने पर देखा कि लाल पत्थर के हो गये थे। सेठ ऐसा देखकर इतना दुःखी हुआ कि उन पत्थरों से सिर पटक–पटक कर मर गया। सेठानी, हिरण मरकर स्वर्ग गये और सेठजी मरकर नरक गया।

लोभ करने वाला जीव कर्म का बंध करता है।
लोभी जीव हमेशा औरों का चैन हरता है।।
लोभी औरों की परवाह नहीं करता प्यारे भाई।
लोभी औरों का धन छीनकर स्वयं का पेट भरता है।।

20. कर्म का बोझ

झाँसी की ओर मार्ग पर विहार चल रहा था लगभग तीन–चार किमी. की दूसरी शेष होगी तभी साथ में चलने वाले लोग आनन्दपूर्वक हास्यमय वातावरण में साथ चल रहे थे।

आगे जाकर देखा कि एक वृक्ष अपने सिर पर लकड़ी का बोझ लेकर चल रही थी उसे देखकर लोगों ने कहा– महाराज ! देखिए यह बूढ़ी अम्मा की हालत पैदल चलने की तो नजर नहीं आती है और यह लकड़ी का बोझा लेकर आगे शहर तक कैसे जा पाएंगी?

तब अनायास ही मुख से निकला ''यह लकड़ी का नहीं कर्म का बोझा सिर पर ढ़ोकर ले जा रही है शायद इस बुढ़िया ने पूर्वभव में किसी का कर्ज लिया होगा और वापिस नहीं चुकाया होगा अतः वह बोझा आज इस रूप में चुकाना पढ़ रहा है। यदि यह बुढ़िया आपके द्वार पर जाएगी, आवाज देगी, लकड़ी खरीद लीजिए, आप लकड़ी का गट्ठर देखकर बोलेंगे– अच्छा माँ

बोल लकड़ी कितने की देगी। यदि वह कह दे कि बीस रु. तो आप क्या कहेंगे यदि ना कि इतनी सी लकड़ी बीस रु. में आ रही है, चल दस रु. ले ले और डाल दे हमारे घर पर वह कहेगी नहीं कम होते तो आप पुनः कहेंगे चल अच्छा बारह रु. ले लेना अब तो ठीक है न। वह संतुष्ट हो या ना हो किन्तु आप कहेंगे ठीक है जा ले जा घूम–फिर के आएंगी यहीं पर कोई नहीं लेगा दस रु. में हमने तो बारह रु. बोल दिया है।

हम पूछना चाहते हैं कि आप या आपकी सेठानी से कहा जाए कि आप बीस रु. भी ले लो और लकड़ी भी ले लो, जहाँ से यह बुढ़िया लकड़ी बाँधकर लाई है वहाँ से सिर पर रखकर ले आओ, बोलो आप तैयार होंगे। उत्तर मिला नहीं। क्यों भाई, क्या हो गया? वह भी इंसान है, आप भी इंसान है, फिर क्या बात है कि आप पैसे लेकर भी नहीं पाते वह आपके द्वार पर खड़ी आपसे गिड़गिड़ा रही है यह क्या कर्म का ही खेल नहीं है, यह कर्म का ही बोझ नहीं है।

किसी कवि ने कहा भी है–

जे कर्म बड़े बलवान टरत नैयाँ टारे।
इनसे सब टक्कर मार–मार के हारे।।

प्यारे भाई ! यह कर्म का बोझ ही लेकर आपके द्वार पर दस्तक दे रही हैं। देख ले सेठ मैंने पूर्वभव में सत्कर्म नहीं किया तो कर्म का बोझा ढो रही हूँ। अब तू सचेत हो जा कहीं ऐसा न हो कि मेरे स्थान पर तुझे आना पड़े उस भिखारी की भाँति.....

भिखारी द्वार पर भीख माँगने आया, सेठ ने बहाना बनाते हुए कहा–

अभी पत्नी घर पर नहीं है तो भिखारी कहता– सेठजी शुक्र है, मैं पत्नी थोड़े ही माँग रहा हूँ, मुझे तो कुछ खाने के लिए दे दीजिए। सेठ चुप रहा थोड़ी देर बाद पुनः कहा सेठजी– कुछ दे दीजिए। पुनः सेठ ने बहाना बनाया, अभी आदमी नहीं आया। जब आदमी आ जाएं तो दिला देंगे। पुनः वह भिखारी कहता है– सेठजी, थोड़ी देर के लिए आप ही आदमी बन जाइये। सेठ पुनः चुप रह जाता है। भिखारी पुनः माँगता है तो सेठ झुंझलाकर बोलते– जा भाग जा यहाँ से मेरे पास कुछ भी नहीं है तो भिखारी ने कहा– अच्छा मुझे पता नहीं था कि आपके पास कुछ भी नहीं है यह बहुत अच्छा हो गया। आपने मुझे बता दिया अब सेठजी ऐसा करें, हमारे साथ अभी चले तो हम भी भीख माँगेगे और आप भी माँगना, यह ठीक रहेगा। सेठ निरुत्तर हो गया, उसे अपनी गलती का अहसास हो गया, भिखारी तो चला गया किन्तु सेठ के मन में ज्ञान का दीपक जला गया।

कर्मों का है बोझा उठाए फिरते हैं लोग।
कृत कर्मों से अपने जो पाते हैं संयोग।।

कर्म का उदय हमेशा इंसान के साथ रहता है।
विशद कर्म करना तो इंसान के हाथ रहता है।।
इसलिए भगवान महावीर ने कहा हमेशा सत्कर्म करो।
कर्म का सुफल दुष्फल इंसान के माथ रहता है।।

***

विशद मूक उपदेश

विशद मूक उपदेश

विशद मूक उपदेश

विशद मूक उपदेश

प्रेम प्रकृत्ति का सबसे मधुर उपहार है।
यह उन्ही को मिलता, जिनका अच्छा व्यवहार है।।
प्रेम कहीं बाहर खोजने पर नहीं मिलता।
प्रेम तो विशद अन्तश् चेतना की पुकार है।।

विशद मूक उपदेश